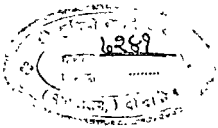




232  
का.स.स.

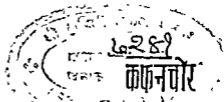




कला भारती प्रकाशन

५५, ५६, ५७, ५८, ५९, ६०, ६१, ६२, ६३, ६४, ६५, ६६, ६७, ६८, ६९, ७०, ७१, ७२, ७३, ७४, ७५, ७६, ७७, ७८, ७९, ८०, ८१, ८२, ८३, ८४, ८५, ८६, ८७, ८८, ८९, ९०, ९१, ९२, ९३, ९४, ९५, ९६, ९७, ९८, ९९, १००

२२३  
कदानी



कफनघोर और बीस अन्य-कहानियों के इस संग्रह का प्रकाशन—समाज में फैली हुई लूट-भ्रष्टाचार, पाप और अनाचार, कुण्ठा और अनास्था के माहौल में—एक अर्थपूर्ण और महत्वपूर्ण प्रयत्न है।

रचनाकार श्री तिलक नई पीढी के कहानीकार हैं, किन्तु नये नहीं। उनमें एक प्रकृत कहानीकार के सभी गुण भरपूर विद्यमान हैं—सतत निरीक्षणशील ऐसी दृष्टि, सामाजिक जीवन की तहों में पँठकर अन्तर्मन की क्षमता, जीवन-सत्यो और मूल्यों को अनावृत कर उनकी प्रभावशाली अभिव्यक्ति, रोचक वर्णन-शैली और प्रवाह।

इन कहानियों में हमारी रोजमर्रा की ज़िन्दगी के ऐसे रंग-विरंगे यथार्थ चित्र हैं जिन्हें पढ़ते पढ़ते मन आत्मविभोर हो जाता है। इनमें यदि एक ओर सोपण, गरीबी और दुख-दैन्य के तिलमिला देने वाले बटु-मषार्थ और तीखे व्यंग हमारी सहज सम्बेदना को उद्बुद्ध करने वाले हैं तो दूसरी ओर 'नई ज़िन्दगी' की अगवानी के लिए सारी सुशियाँ और पुरजोश संघारियाँ भी हैं।

एक ओर इनमें मानवीय दुर्बलताओं, भ्रम और मदेहों के स्वाभाविक छाके हैं तो दूसरी ओर आदर्शों और उच्च मूल्यों की मोनारें भी हैं जिनमें सहनाइयों के स्वर गुंज रहे हैं। प्रबुद्ध रचनाकार ने एक तरफ नवनिर्माण में नीररणाही हृषकण्ठों, पाप और पोलखतों को घेतत्रात्र बिगा है तो दूसरी ओर देस और इगानियत के स्वर्णिम भविष्य की अगवानी भी।

इस संग्रह में चुन चुन कर निछले दशक में रची गई तिलक जी की वे कहानियाँ हैं जिन्हें प्रबुद्ध पाठक बार बार पढ़ेंगे। कुछ निगाहर इन कहानियों में वह सब कूट है जिनमें इगान की प्यार है और जो हमारी सनाबी सम्पत्ता की घरोहर है।



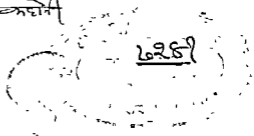
कला मारती प्रकाशन

©

श्री तिलक

कला सज्जा : श्री योगी — रेखाचित्र : श्री सिद्धेश्वर अंवस्थी  
आवरण : जाँव प्रेस प्राइवेट लिमिटेड के सीजन्य से  
मुद्रण : जे. पी. फाइन आर्ट प्रेस, कानपुर  
प्रकाशन : कलाभारती, १६/२० वी, सिविल लाइन्स, कानपुर  
प्रथम संस्करण : १९६३ — मूल्य : पांच रुपए

233  
अध्याय



विद्यालय शिक्षण - प्रेमचन्द और गोर्की  
की परम्परा को

की विद्यालय शिक्षण  
की परम्परा को



कफ़नचोर १	६३ मुजरिम
हमसफ़र ८	८० नई जिन्दगी
सांस और सिसकन १५	८७ सपरिवार प्रार्थनीय
टिकुली १९	९१ मूल्यांकन
जिन्दगी वहती है २४	१०३ प्रायश्चित
प्रेम-पत्रे २९	१०७ जब पत्थर ने शहादत दी
व्यूटीज़ आफ एशिया ३४	११३ आशा के दीप
फ़िनिशिंग टच ३९	१२० तूफान के बाद
शिकवा शिकायत ५०	१२५ कम्बल और कवि कौशल
झटके ५७	१३० चांदी का गडुआ

१३५

खत का मजमूं



4

5

6

7

8

9

10

11

12





कफ़नचोर १	६३ मुजरिम
हमसफ़र ८	८० नई जिन्दगी
सांस और सिसकन १५	८७ सपरिवार प्रार्थनीय
टिकुली १९	९१ मूल्यांकन
जिन्दगी बहती है २४	१०३ प्रायश्चित्त
प्रेम-पत्रे ३९	१०७ जब पत्थर ने शहादत दी
व्यूटीज़ आफ़ एशिया ३४	११३ आशा के दीप
फ़िनिशिंग टच ३९	१२० तूफ़ान के बाद
शिकवा शिकायत ५०	१२५ कम्बल और कवि कौशल
झटके ५७	१३० चांदी का गडुआ

१३५

खत का मज़मूं



## कफ़नघोर

दुनियां कहां से कहां पहुंच गई मगर आज के इस नुमाइशी युग में भी चौक का मुहल्ला सदियों पिछड़ा जान पड़ता है। नगर-निर्माण, स्वास्थ्य, सफाई और आधुनिकता के सम्पर्क से सर्वथा वंचित सा। गोल दरवाजे के अन्दर, सड़क के नाम पर एक तंग सी टेढ़ी-मेढ़ी गली है— जिसके दोनों तरफ मिठाई, तम्बाकू, बिसात-खाने, गल्ले और सरफि की बेतरतीब दुकानें और ऊपर कोठों से झाकती हुई मजूबरियां हैं और समूची फिजां में एक अजीब सी गलाखत। मेले की रात है। पास और दूर के मुहल्लो से लोगों के दल के दल उमड़े चले आ रहे हैं। दूकानदारों का हाथ नहीं खकता अपने अपने ढंग से सभी व्यस्त जान पड़ते हैं। बच्चों को चटोरापन पागल किये हुये हैं और युवतियां बिसातखाने की दूकानों पर टूटी पड़ती हैं। बड़े मियां सरीदारी से तंग आ चुके हैं; खोपड़ी पर गर्दनतोड़ बोझ लद चुका है, मगर रहीमा की मां को अभी भी तृप्ति नहीं है। एक अजीब सी घकापेल है। सारी की सारी भीड़ गर्द को रौंदे डालती है और कोलाहल ऐसा कि कान पड़ी बात सुनाई

नहीं देती। सहसा भीड़ से एक जोरदार रेला आया और कुछ लोग एक दूसरे को धकियाते हुये दौड़ने लगे।

“मारो साले को ... पकड़ो ... वह गया ... जाने न पाये” और ऐसी ही बहुत सी मोटी पतली आवाजें एक दूसरे से टकरायीं और गली में हलचल सी मच गई। जिज्ञासाओं की एक लहर सी आ गई। कुछ लोग कानाफूसी करने लगे, और कुछ तमाशवीन कामकाज भूलकर भेड़ाचाल में शामिल हो गये।

मोड़ पर भीड़ का जमघट हो गया और अधिकांश लोग उधर ही टूट पड़े, जैसे उसी काम के लिये यहां आये हों। दूकानदारों के दिलों पर सांप लोट गया, मगर यहां हानि लाभ, जेब और पैसे की चिन्ता किसे थी। सोलह सत्रह साल के एक छोकरे पर वेतहाशा मार पड़ रही थी। जिसे देखो वही गुस्से में पागल नजर आ रहा था। लड़का सर वचाता तो पीठ पर धमाका होता और पीठ वचाने का मीका ही कहां था। एक ने कभीज्ञ का गला पकड़ रखा था दूसरे ने उसके बड़े बड़े खूशक वालों को जकड़ रखा था। वहाँ पहिले ही वेकावू थीं। और करवला के इमाम साहब गुस्से से तमतमा रहे थे।

“कफ़नचोर है साला।” एक ने कहा।

“चोरी की सज़ा मिलनी ही चाहिये।” दूसरे ने फ़ैसला सुनाया। और लड़के के मुँह पीठ और कन्धों पर एक साथ दस बीस घूसे तमाचे बरस पड़े।

“मुर्दे का कफ़न!” दुन्नी खलीफ़ा ने आश्चर्य प्रकट किया, “लाहौल क्या ज़माना आ गया है।”

“मैं...मैं तो...।” लड़के ने प्रकम्पित स्वर में कुछ कहना चाहा।

“मैं मैं नहीं, रंग दो साले के लहू से।” दांत पीसते हुए एक अधेड़ उम्र सज्जन ने कफ़न की चादर दिखाई। लड़के के उतरे

कफ़नचोर

हुये मुँह पर एक घूँसा और पड़ा। आँसुओं में खून की सुखी वह चली।

“आखिर ये क्या तरीका है ?” नज़ीर मियाँ ने बीच में पड़ते हुये कहा।

“आपसे क्या मतलब जी ?” एक सूरमा गुस्से में बड़बड़ाये।

“तेरी मां ……”, नज़ीर मियाँ ने एक ही सांस में कई चुनीदा गालियाँ दे डाली, “मतलब पूछता है ? और हमसे !”

नज़ीर पहलवान की लाल लाल आँखें, भीमकाय शरीर, कलफदार मूँछे और भयंकर मुद्रा देखते ही भीड़ में सन्नाटा छा गया।

“छोड़ दो इसे”, हुकुमराना ढग उन्होंने कहा, “हमारे सामने से नहीं भगेगा।”

नज़ीर के कहे पर तत्काल अमल हुआ। लड़के ने आँसुओं की पनचादर से नज़ीर मियाँ पर कृतज्ञतासूचक दृष्टि डाली और दूसरे ही क्षण कमीज के फटे दामन से मुँह पोछने लगा। कमीज का दामन और गरेबाँ अबतक करीब करीब तर हो चुका था।

“चोरी का इल्जाम सही है ?” नज़ीर मियाँ ने अपनी भारी भरकम आवाज़ में सवाल किया, “कफ़न चुराया था तूने ?”

“मैं ‘‘हुज़ूर’’’ लड़का गिड़गिड़ाया।

“सही बात पूछता हूँ। याद रखना ! … नज़ीर का गुस्सा बहुत खराब है। समझा ?” पहलवान ने मूँछ का दाहिना सिरा उभेठते हुये कहा।

“हूँ !” लड़के ने शर्म और सहमति से गर्दन झुका ली।

“सजा का खौफ नहीं था तुझे ?” नज़ीर ने थड़ी आत्मीयता से कहा, “चोगी’’ और वह भी कफ़न की !”

“मेरी मां...”, लड़के ने रुँधे हुये स्वर में रुक रुक कर कहा,  
“मेरी माँ बहुत बीमार है।”

“वकता है साला”, एक वुजुर्ग ने शिकायत की, “देखा पहलवान ! नम्बरी बहानेवाज मालूम होता है। मां बीमार है इसकी !”

“ठीक तो है। कफ़न का इन्तजाम पड़ले मौत बाद को।”  
नुकड़वाली दूकान से लाला जी ने फ़स्ती कसी।

“मुना तूने !” पहलवान ने लड़के का कन्धा झकझोरा, “क्या नाम है तेरा ?”

“शवराती।” लड़के ने धीरे से कहा।

“रहता कहां है ?”

“यहीं, शामीना साहब के अहाते में।”

“बाप क्या करता है ?”

“बाप तो रहा नहीं।”

“और तू ?”

“मेहनत मजूरी”, शवराती ने कहा, “जो मिल जाय...।”

“तेरी मां बीमार है ?” नज़ीर ने प्रश्न किया।

“हूँ।” लड़के ने संक्षिप्त सा उत्तर दिया।

“कफ़न तुझे कहाँ मिल गया ?” पहलवान ने आश्चर्य से आंखें फैलायीं।

इससे पहिले कि शवराती कुछ कह पाता, इमाम साहब बोल पड़े। “मज़ार खोद कर निकाला है, बदबख्त ने। अँधेरी रात होती तो भला ये हाथ आता।”

नज़ीर पहलवान ने हुजूम पर दृष्टि डाली और उनकी आंखें पुनः शवराती पर आ टिकीं।

“तो ज़न कफ़न किस लिये लाये थे ?” पहलवान ने शवराती र एक थपकी रसीद की।

“मेरी मां”, शवराती की आँखों से आँसू छलक आये, “गरीब आदमी हूँ। उसकी पीठ और पसलियों में दर्द है। बुखार बहुत तेज है वाबू।” लड़के ने बड़ी दयनीयता से कहा।

“इलाज कराया होता। इसके लिये कफ़न की क्या ज़रूरत ?” पहलवान ने लापरवाही से कहा।

“अस्पताल गया था। सवेरे डाकटर को फुरसत नहीं थी।” शवराती बोला।

“शाम को नहीं गया ?” पहलवान ने पूछा।

“गया था वाबू। दिन छुपे नम्बर आया तो पर...”, लड़के ने हिज्जे से करते हुये कहा, “डाकटर कहते हैं मरीज को यही ले आ। बिना दखे दवा नहीं मिल सकती।”

“ठीक तो कहा उन्होंने”, एक खट्टरधारी महाशय बोले, “घर क्यों नहीं बुला लिया ?”

“वाबू”, लड़के ने ठडी साँस ली, “घर पर दिखाने की फीस पड़ती है। मेरी मां ...”

“अबे तो अस्पताल ले जाता।” समाज सेवी ने झुंझलाकर कहा, “हर ऐरेगैरे के घर डाकटर थोड़े ही जा सकता है।”

“ठीक कहते हो नेता जी ! इसने जेल कहाँ काटी है !” एक आवाज़ आई।

“तो सरकार कहाँ कहाँ एम्बुलेंस भिजवा दें ! देश क्या स्वतन्त्र हुआ दिमाग खराब हो गये !” समाजसेवी जी बड़बड़ाये।

“लैक्चर बन्द कीजिये।” पहलवान ने टोकते हुये कहा, “चल दिखा कहाँ है तेरी मां।”

लड़के की बाँह पहलवान ने अपने हाथ में लेनी। जो भीड़ अब तक सामोश खड़ी थी उसमें जिन्दगी जैसी हरकत घुट हो गई। तमाशबीनी की अकलमन्दी छांटने का मौका मिल गया।

मन में सनाता ही गया और सापेक्ष के भीतर विभक्ति का काम आ गया ।

“मुझे का कज्जल”, इमाम साहिब ने ठंडी सास ली, “मुझे के

पहेलवान ने मरिचि स्वर में एक एक कर कहा ।

“वृष्टि का मूँष और सर्प से...जवाब मिल गई .....”

“ ? ”

साँझ पर वृष्टि आने लगी है उज्ज्वल सजावट का, “कहा गया”, “अतः आज के लिये जिस्म पर कपड़ा भी तो बाँधिये ।”

नबी र मिर्चा उदासी से मुँह से लटकाये बाहर आये ।

और लडका फँस कर रोने लगा ।

“पहले मर गई ।” इमाम साहिब ने नज्द खिंचे लिये कहा ।

लडका ही रोया था ।

से सदा हुआ । यही र विवरण । कमर पर टाट का एक फटा

आमी के गण-गण्डे उड़ चुके थे । होल पाव लीसे । पेट पीठ

“आमी” लडके ने वृष्टि का के माथे पर डाल कर “आमी ।”

कई लोग अन्दर घुसे । आमी की गति अवकल हो गई ।

रूँहें हो गया ? लडके के पीछे पीछे पहलवान, इमाम साहिब और

पर भी आलीशान कठिंधी की सफाईयें पूरा कर दीं । अन्दर

एक साय बहिन ही टापी की रोशनी ने उस टैटे लिये सापेक्ष

क वस थी कि वस न पुख्ते आने का नाम ही न ले रही थी बड़े बड़ों से खड़े खड़े मैंने कई बार सड़क पर दूर दूर तक नजर दौड़ाई,

के बारे में सोचता तो उसे मुझसे हमदर्दी ही हो सकती थी ।

हंसद भी क्याकर हो सकता था ? बकि, अगर कोई सरी जागड़े याद है कोई क्याहिशामद न था ; और इसलिये किसी को मुझसे आजादी से हिल-डूल सकता था । सरी जागड़े का, जहाँ तक मुझे उस रोज, बदनसीबी से मैं कतार का आखिरी आदमी था ।

और नार्चक लोग भी तो हैं ; लेकिन दिल को तस्कीन कहाँ !

की गराब से मैं खूद से कहता हूँ कि दुनियाँ में आखिर कुछ कमबोर खिरमानी ताकत का ख्याल आ जाता है । और तब, जैसे खोज मिटाने कतार के आखिर में आयें तो कमअजकम मुझे अपने डीलडौल और फर्ष का रवाज पूँचुरा नहीं—लेकिन कभी जब अपना नम्बर

हमसफर



और पसीने की एक ऐसी गंध छूट रही थी कि मैंने जब तक वह पत्र  
 विजली की तरह धमक उठते । उनके शरीर और कपड़ों से मूल  
 रही थी । जब तक वह हँसते तो उनके माते हँसों से पीछे पीछे दौल  
 लेंद साक करते हँसो—अपनी मादरी जवान से कँध करे मैं  
 मेरे ठीक आगे दो पसोड़ी छोकरे—जो थापद किसी धवे में  
 पकरी बदलते चल रही थी ।

मैंने से 'हँ', 'हो', 'हो' भी निकल रही थी और लटक से कि दौलियों की  
 खंडे लम्बाई की जगलियों भी कर रही थी । जब-तब उनके बेहोले  
 लहे कहेर रही थी—वातवायु का मजल भी से रही थी और खंडे  
 से बाहर आकर रहा था और सँतिया सिलपट खोपड़ी पर धुंध की  
 एक तीसरे तिलकधारी सज्जन—जानका जनेऊ रामनामो धादर  
 सोलहे सेर धूप और अर्घंड सेर भी मिलता था ।

रहे कर उस जमाने की दाद दे रही थी जब कपड़े की बीस सेर गेहूँ,  
 धान लगते थे, महेली का रोता रो रही थी । दूसरे बर्जग रहे  
 एक अर्ध उम सज्जन, जो बाहिरा तीर पर किसी दरवार के  
 चहरी पर होला है ।

इतनामान था । इतनामान—जो मया: स्कॉली लडके-लडकेकाये के  
 परेशान न थे, क्योंकि उनके चहरी पर, उनकी आलचीव में एक  
 सकता था । फिर भी मेरी खाल है कि वे मेरी लहे  
 किसी मई या और के सीने पर दिला रखकर देवे भी तो नहीं  
 लेकिन क्या उनके दिल भी मेरी ही लहे छुके-छुके कर रहे थे ?  
 मेरी ही लहे और भी कड़े लोग उस की बात जोहे रहे थे ।  
 मिले न मिले—वस मेरा दम पटा जा रहा था ।

गाड़ी छूट जाने का अन्धेरा और कँध यह देखापण कि वस में जगहे  
 मुझे 'रिलिजिबरी' का सिडानल समझाने पर गुला हुआ है । कँध तो  
 बेसरी से उसका इलाज करती रहो । एक एक मिनाट जैसे

## हेमचक्र

धर्म का रक्षण पूर्वरा नहीं—लेकिन कभी जब अपना नन्दर  
कतार के आखिर में आप तो कमथयकम मुझे अपने डीलडौल और  
जिन्दगीना ताकत का खाल आ जाता है। और तब, जैसे खीज मिटाने  
की गरज से मैं खूद से कहता हूँ कि दुनियाँ में आखिर कुछ कमजोर  
और नार्थक लोग भी तो हैं; लेकिन दिल को तस्कीन कहाँ !  
उस रोज, बदनसीबी से मैं कतार का आखिरी आदमी था।  
आजादी से दिल-डूल सकता था। मेरी जगह का, जहाँ तक मुझे  
याद है कोई खाहिशामंद न था; और इसलिये किसी को मुझसे  
हसद भी क्याकर हो सकता था? बल्कि, अगर कोई मेरी जगह  
के बारे में सोचता तो उसे मुझसे हमदर्दी हो हो सकती थी।  
वहाँ से खड़े खड़े मैंने कई बार सड़क पर दूर तक नजर दौड़ाई,  
लेकिन वस थी कि वस न पहुँचिये आने का नाम ही न ले रही थी वहीं

और पक्षियों की एक ऐसी श्रृंखला थी कि मैं जब बचकर  
 विजली की तरह चमक उठते। उनके पीछे और कपड़ों से धूल  
 रहे थे। जब वे हँसते तो उनके मोटे डोंटों से पीले पीले धूल  
 छूटे साफ करते होंगे—अपनी मादरी उड़ान में कूँड़ करे मैं  
 धरे ठीक जगह से उड़ती थीं—जो साफ़ किरीटों से

बचती बचती चल रही थी।

मैं से 'है', 'है', 'है' थी कि लज रही था और किन्तु वे किरीटों की  
 छड़ें लम्बाई की उगाली थी कर रहे थे। अब-तब उनके डोंटों  
 पर कड़ेरी रही थी—बातचीत का मजा भी से रहे थे और छड़ें  
 से बाहर साँक रही थी और बँटिया मिलकर खोपड़ी पर झण्ड की  
 एक तीसरे तिलकमारी सजान—जिनका जन्म रामनामी बाद

सोने से रूँध और अर्धाँसे र पी मिलता था।

रहे कर उस जमान की दाद है रहे थे अब कथं का बीस धरे गेहूँ,  
 बाँधे लगे थे, महेगी का रोगा रो रहे थे। हँसते उड़ते रहे  
 एक अर्ध उध सजान, जो आदिरा पीर पर किरीट धपार के

बहरी पर होना है।

इसमीन था। इतनीगान—जो मज. एकैकी लड़के-लड़कियों के  
 परदेगा न थे, क्योंकि उनके बहरी पर, उनकी बातचीत में एक  
 सकार था। फिर भी मेरी खाल है कि वे मेरी तरह  
 किरीट मढ़े था और क सीने पर होय रखकर देखे भी तो नहीं  
 लेकिन क्या उनके दिल भी मेरी ही तरह धुँक-धुँक कर रहे थे ?  
 मेरी ही तरह और भी कड़े लोग बस की दाद जा रहे थे।

मिले न मिले—बस मेरी दम घंटा जा रही था।

गाड़ी छूट जाने का अन्देश और कूँड़ पड़े राशीपत्र कि बस में जा रहे  
 मुझे, 'लेटिपेटरी' का सिडान समझाने पर चुला हुआ है। कूँड़ तो  
 बसों से मैं उसका इन्तजार करता रहा। एक एक मिनाट जैसे

और बाहरी भरी किरमत ! दूर से आते हूँ एक मोटर दूक के दौरे ने उसे चौंका दिया । अब उसका चेहरा मुझे एकदम स्पष्ट था—लेकिन भरी किमती इलाज एकदम बदल चुकी थी ।

गार्डन ऐसे कि दिल में धक्का देते और पता भी न चले । किसी मध्यकालीन खिण्णी ने गढ़ी है । बाल-बाल चमकते हूँ की और जा लगी । दौधों की पतली और सुडौल उगलियाँ जैसे ज्यादा ताकतवर होती हैं और अनजाने ही भरी आँखें पुनः उस लड़की में डालना चाहता था ; पर दिल की आवाज ने किमती से कहते जैसे उस के लिये फिर से नजर दीड़ार्द्ध—जैसे मैं खुद को भूलते

झकझोरती हूँ ।

जैसे मैं कोई अपराध कर रहा हूँ । मुमकिन है मेरे संस्कारों ने मुझे की कल्पना भी नहीं की जा सकती थी । फिर भी मुझे जान पड़ा यही है कि वही भरी कोई परखित न था ; किसी के वहाँ होने के समझकर मुझे दूर रहे हैं । लेकिन दरदकीकत ये आम था । यह तभी मुझे एक झटका सा लगा । लगा, जैसे सारे राइगीर और

डूला भी, लेकिन बेकार ।

पढ़े खड़ी ही ऐसे दंग से थी । मैं अपनी जाहले से थोड़ा बड़बुल दिना चढ़ेरा, मैं मुझे मैं नहीं देख सका ; 'सायड-प्राज' भी नहीं—याकि एक ही बार मैं भरी ध्यान आला ने उसे सर तक नाप डाला । झंकारते हूँ उसके गुलाबी पंरी पर पहिले-पहिले भरी नजर पड़ी । मैं पढ़े औरत कहलाने बाधक थी । सार के सफेद सँडियों से पढ़े एकदम लड़की नहीं थी—हील डाल और धीरे की चार

सपाटी में—एक लड़की में जा उलझा था ।

नहीं सका । मैं सपने की कालियाँ भी नहीं की । मुझे फुरसत नहीं थी कहेगी थी । भरी किमती ने उस और दूक की डीड़ार्द्ध एक लड़के दिना ही ज्यादा मुगलिय सपना । मैं उतरी आनखी सपना

"आखिरी खोजें करने की" "आखिरी खोजें करने की"

"दीर्घावस्था नहीं" "एक ही कदम"

क्या है आपका मूल्य ?

उसने सोच कर आगे बढ़ने वाले पहिले ही आन्दर पहिले ही । क्या  
 और तो का निहाल किमी की न था । क्या बना खरूर था लेकिन  
 टूट पड़ी, जैसे हरे किमी की अपनी निकर थी ; बूझे, जल्दी और  
 खोजने से बचा गया । वह आकर खोजी और खोजी एकदम  
 मकाम पर से आकर मुझे दिमागी परेशानी और दिमाग से बच

की ही संतुष्टि करती है—मुझे परेशान किसे था ।

उसने नीचा दिखाने की वस एक ही लम्बा—जिसकी संतुष्टिनासबब  
 पड़ी का संतुष्टि—अपनी गाड़ी से मुझे यह बहरे छोड़ देना था ।  
 मुझे इच्छा आ गई कि उठे । लेकिन मैं कर क्या सकता था ? दो  
 मकाम का दिमाग की तरह उस अपरिचित की नीचा दिखाने की  
 क्या उसके हरे-लाल की किमी है—हीन कर्म भी न सीचा । बलिक  
 वह कीन है ? क्या करती है ? क्या उसकी मजबूतियाँ हैं ?

की मजबूतियाँ में हीन बल दिया है ।

मुझे था । मुझे हीन उस कोर जैसी थी जिसने बहरे के छोले बहरे  
 जाने कहे उड़ गया । नदी की आगे एक तरह का कर्तव्यपन से  
 ही उदास बहरे की देखते ही मेरा वह 'कस्ट सोमट' वाला मर्या न  
 मुझे-मुझे अर्थ, मुझे हीन हीन, मुझे हीन हीन गाल और लटक

क्या मुझे फिर भी हीन लगी ।

बेचक के बेच्युमार दाम थे । उस सिल जैसे दामि बहरे से, न जाने  
 मार्गमिपन थी और न जीवन की व्यापक ही मुझे दिखाई दी, बलिक  
 अपने 'दुपट्टी' पर कर रही थी । उसके बहरे पर न बच्यो जैसी  
 और के बारे में कटोरे में जैसे मजबूत निकल आई ही । गालिबन, वह

“बोला है जो नाथ है।” कन्डक्टर ने किसी नवपान्तक पर झुंझलाते दृष्ट कहे और तमाम सवारियों की निगाहें एकबारगी हो रही थी।

लड़की की निराशा और बेवसी से मुझे एक तरह का आत्मतोष बनती-विगड़ती रेखाओं के अध्ययन में। सही बात यह है कि उस सन्देहान में मशगूल था और मैं उस 'लेडी' के चेहरे पर क्षण-क्षण उर्ध्वल इन पर लागू हो नहीं होता। वस-कन्डक्टर अपने जैसे कानों पर जूँ तक नहीं रंगती। समझते हैं जैसे 'लेडीज फस्ट' का जगह तलाश करती हों। लेकिन ये हिन्दुस्तानी मुसाफिर हैं जिनके से इधर-उधर दृष्टि दौड़ा रही थी, जैसे तमाम सीटों में अपने लिये जगहानी सीटें भी ढूँढ़ रही थीं। और यह महिला बड़ी बेजो जगह पा गये हैं वे जगह की तंगी को रो-शोक रहे हैं।

टिकट नहीं मिली वे टिकट के लिये निवर्त कर रहे हैं; और जो ये दालत कि पावदान पर लटकने की भी जगह बाकी न थी। जिन्हें होने की जगह में सोलह की बजाय खज्जीस सवारियाँ। थोड़े की बड़ी थी। और लीजिये गाड़ी भर गई। सीटें खचाखच। खड़े मिल गई। उस लड़की को भी—जो वस-कन्डक्टर की नजर में ली थी, उस देव-देवी के बाद मुझे खड़े होने भर की जगह और क्या होगा ?

और लीजिये जा रहे हैं—उनके चलन के लिये हमसे बहिष्का मीका मुसकिन है किन्तुव जग जग। खरख सिर्फ बड़बड़ लिये-दिये था, रेखागरी की किलब से परवाना होकर अलग खड़े हो गये—इन्हीं से बहरणी पार हो जायेंगे। एक सहेज पांश का मोट कन्डक्टर महेयाय टिकट बाँटते रहे—कुल ऐसे अंदाज में जैसे यों किसी का गैर कुचला; किसी के पंश निर पड़े। और “आपही की नहीं जाना, और भी है।” तीसरे ने टिकट लगाई।



जही नही माँ

एक अर्थ उम मजबूत हो देखने में किसी प्रकार के धर्म लाने  
 थ-कई कर रहे थे। और दूसरे वर्जना उनकी ही में ही मिल रहे थे।  
 पहिले जो हैं ही कर रहे थे और उनकी जगहों पर बदल रहे थे।  
 और वे पढ़ाई शुरू कर रहे थे और अपनी मादरी जवान में कुछ कहे  
 सुन रहे थे। उनकी बातचीत में नही समझ सका। समझने की  
 कोशिश भी नही की। मुझे फेरबत भी नही थी क्योंकि मेरा विमान  
 उस और है न की शुरू कर एक सवाली में चलना हुआ था-वह

उसे मारने दिया।

महिला फिर से जमान में पड़ गई। लेकिन उसे और उसने  
 मुक्ति में काम लिया। पढ़ने की जगह गिर में उठा लिया। और  
 अब वह उसे फुलाने का प्रयत्न कर रही थी। मर्दान की प्रार्थना  
 उसे न दिया सकी तो महिला ने अपने बच्चे में खोले हैं कौन देकर

शुक्रिया अर्पण करने में लगे थे।

हरे लाली का प्रेम जहाँ तक कि लाली भी न पाया था कि लड़का  
 उसी गिर में उठा गया। "अच्छा लाली" "अच्छा लाली" "अच्छा लाली"  
 लाली का नाम था कि लाली का नाम था कि लाली का नाम था कि लाली का नाम था  
 लाली का नाम था कि लाली का नाम था कि लाली का नाम था कि लाली का नाम था  
 लाली का नाम था कि लाली का नाम था कि लाली का नाम था कि लाली का नाम था

जहाँ गिर में है ही लाली का नाम था कि लाली का नाम था कि लाली का नाम था  
 लाली का नाम था कि लाली का नाम था कि लाली का नाम था कि लाली का नाम था  
 लाली का नाम था कि लाली का नाम था कि लाली का नाम था कि लाली का नाम था



लिख कर आगे बढ़ते हैं।

के बड़े बासना से प्रथम होकर आगे आगे बढ़ते हैं ! पर लिख  
अपेक्षित और असाध्य रूप है। मैं देख रहा हूँ जिनसे अविनाश  
विक्रम से आ जा रहे हैं। उनकी हँसियाँ से आँसू में उनकी  
बसाया है। पर-गोदियों के अलावा एक धारा नरक के भीग बड़ी  
अन्यथावह भी इस सींगदार गली में बहने लगने लगी है

पिगीनी है।

दुर्भाग्यवत् पत्नी और दुर्भागनी की भूलना एकदम बेतरीब और  
गली के मोड़ पर आ पहुँचा हूँ। गली खाली है। दोनों तरफ  
मछलियों की तीव्र गंध से गुजर रहा हूँ। चलते चलते एक  
राजपूत पीछे छूट गया है। मैं माकड़ की पार करता हूँ आ मैं  
परमलना का निस्तीर्ण चौराहा और चौराहा का नयनाभयाम

साँस और सिसका

सिगरेट खरीदने के बहाने एक पनवाड़ी की दुकान पर खड़ा होकर मैं रूप की मूछे दाद देखा रहा हूँ। मेरे ठीक सामने सिगरेट का बूँआ उड़ता हूँ एक चीनी लड़की है, जिसके शरीर से विषके

जैसे बाजार में विकने वाली बर्तियाँ या और कोई चीज।  
 की सहेज लज्जा और उसका नारीत्व जैसे ही खरीदा जा सकता है रहती है। मैं सोच रहा हूँ समाज के मौजूदा ढाँचे में ऐसे से नारी और बेवैध होकर वे अपने रूप और शरीर का मोल-भाव कर में 'वोग मॉडिना' का दूसरा ही रूप देखा रहा हूँ। कितनी बेजान किसी जैसे ही अनमोल मोती को पा सकता। मगर यहाँ आकर अंकित थी। मैं अक्सर सोचता था, काश बांगल की खड़ी के मेरे दिमागी कंवच पर शरत् और रवीन्द्र की लजली बर्तियाँ

है या आत्मा की ?

से पूछ नहीं पाता इन मीन संकेतों के पीछे गुंदाशे शरीर की भूख से जैसे देर किसी को दाबत दे रहा है। चाहेते हुए भी मैं किसी श्रृंगार के साथ मूलतः लोगों से खड़ी-बैठी है और भाव भणियाँ औरते खड़ी खड़ी किसी का इन्जोर कर रहा है। पूरे वनाव

बरा की देहलियाँ पर चौदह से चालीस तक की लड़कियाँ और

कर रहा हूँ।

गलियों में भटकते वाली बहों की पढ़ने-समझने की कोशिश निठले अक्षरों की तरह इन बरकरदार गलियों को गण रहा हूँ। ठिकता हुआ, सोचना हुआ, सिगरेट का बूँआ उड़ता हुआ एक की तरह मैं भी अपने दाँव दाँव नवरं डाल रहा हूँ। होले होले, कितने-कतिपय एक तरफ रखकर सीना नहीं चाहता। और लोगों भी मैं यहाँ से जा नहीं पा रहा—ठीक जैसे ही जैसे एक परीक्षाओं मेरी परेशानी और उन बाकी सबसे अलग-थलग है। चाहेते हुए घड़ी आकर मैं कुछ परेशानी ही अगुयव कर रहा हूँ, गालि

अपनी घुन में और आगे बढ़ता हूँ। देखता हूँ चीन और  
 एशिया के विभिन्न हिस्सों पर, बंसी हो गंग  
 चीनियों का ही है—फ्रांसीसी एशिया से सीधा पता रहता है।  
 मैं उस मस्तिष्क विद्यार्थी को भी देख रहा हूँ जो भारतीय विद्वानों  
 और फ्रांसीसी मण्डलों के बीच बलबली कर रहा है।

पान की दुकान से हटकर मैं एक गली में घुस रहा हूँ। देख  
 रहा हूँ मोड़ की कोठरी से निकलते हुए उस दुबले-पतले बर्तमान  
 नवयुवक को जो यकायक से मुझे उत्कण्ठता से देख निकल रहा है।  
 मैं उस कोठरी को भी देख रहा हूँ जो अपने पत्न सहोदारी हूँ  
 मुझे एक मौन निमग्न देव दरवाजे की तरफ लपक रहा है।  
 उसके हाँकी पर एक छिपियाती हैसी है जिसमें आमतौर पर  
 कुछ भी नहीं है।

पान, मैं रूढ़ से पूछता हूँ।  
 मेरी दृष्टि अब उन पंजाबी एशियाई को घर से पूरे एक गण  
 रही है जिसके सुपना से रानी का कल्पन छूपाये नहीं छूपा।  
 रानी हट्टे का एशियाई कानों से जिसल-फिसल पड़ता है।  
 मैं सोचता हूँ क्या यहाँ है याद गुरु वा जालसा याद गुरु की फल है ?  
 लाला जो और पजाब के फ्रांसिसियानों को याददात का यहाँ रंग है

पहोना बंधा है।  
 एशियाई याद आते हैं जो इन्हीं की तरह मजबूर होकर अपना धर्म  
 देनाकर मुझे बेनिष्ठ की ऐवेस्ट विजय याद आती है। गुरुदा  
 रसिंहदेव के सिपाही और हेलो में काम करने वाले वे पहाड़ी  
 एशियाई याद आते हैं जो इन्हीं की तरह मजबूर होकर अपना धर्म  
 देनाकर मुझे बेनिष्ठ की ऐवेस्ट विजय याद आती है। गुरुदा  
 उसके ठीक बराबर वाले दरवाजे पर कुछ पहिंठते हैं। इन्हें  
 स्मरण पिला रहता है।

हूँ सातन के पत्न उसकी कामर, कन्है, रानी और बंध के 'कंदर'  
 स्पष्ट कर रहे हैं। उसकी यह नामला मुझे स्थान के चीन का

होगा ?

विना  
 -करीब लड़कियाँ और मन्दे मालों में वृत्ति पति  
 भी सोचते होंगे ? जब वयोगे मेरे देश में वह पंचसाला योजना  
 क्या जनसामान्यक वादाहरण और उनके साथी कभी इस बारे में  
 पढ़ेंगे क्या अलग-अलग प्रकार के समाज में इन गणितों की जाँच होगी ?  
 गणितों की कथाओं में होंगे ? 'भारत वहाँ से अलग' करने से  
 बर्तमान हुआ था क्या है : क्या इसी भयानक भूमि पर अहि-  
 सत् अहिंसामार्गिकता और सत्यता की है और सत्यता का  
 सिद्धान्त का उद्देश्य है पढ़ेंगे ही भी पढ़ते नहीं हैं । और पर  
 राज के सब बातें हैं । गणित की चीजें आकर लगी हैं—

होना पड़ेगा

आज हमारे देश में पढ़ेंगे ही भी पढ़ते नहीं हैं । और पर  
 और पढ़ेंगे ही भी पढ़ते नहीं हैं । और पढ़ेंगे ही भी पढ़ते नहीं हैं ।  
 और पढ़ेंगे ही भी पढ़ते नहीं हैं । और पढ़ेंगे ही भी पढ़ते नहीं हैं ।  
 और पढ़ेंगे ही भी पढ़ते नहीं हैं । और पढ़ेंगे ही भी पढ़ते नहीं हैं ।

होना पड़ेगा

आज हमारे देश में पढ़ेंगे ही भी पढ़ते नहीं हैं । और पर  
 और पढ़ेंगे ही भी पढ़ते नहीं हैं । और पढ़ेंगे ही भी पढ़ते नहीं हैं ।  
 और पढ़ेंगे ही भी पढ़ते नहीं हैं । और पढ़ेंगे ही भी पढ़ते नहीं हैं ।  
 और पढ़ेंगे ही भी पढ़ते नहीं हैं । और पढ़ेंगे ही भी पढ़ते नहीं हैं ।  
 और पढ़ेंगे ही भी पढ़ते नहीं हैं । और पढ़ेंगे ही भी पढ़ते नहीं हैं ।

1. 10. 11. 12. 13.

मैं कई खिचियाँ थीं—दिल-दिमाग की—जि मम ही मम में रखती  
करे थी तो राज न था जो देमने आपस में खिचियाँ हो । अरविन्द  
रहे । हम दोनों एक दूसरे के लिये खोली निकलते थे । खिचियाँ का  
मम से गूँथितवसिटी के दिनांक हम दोनों एक तरह से साध हो  
आराम थे । उस जमाने में जब हम लोग गीली-बदला खिलते थे  
सब बात यह है कि वह और मैं, मैं और वह दो शरीर एक

खोली हूँ ।

खिचियाँ मनाते । उसे अन्तर्जाति रूप से वही देखकर मैंने वेद  
ने जो बरसाँ बाद आया था मेरे घर—मेरे साथ बड़े दिन की  
खोली । और मेरी स्वभाव किया मेरे दोस्त प्रोफेसर अरविन्द  
सिन्कर धाराधारा पढ़ास आग खोली—पर का दरवाजा  
पूरे चीज पढ़े कड़ी खिलाने के बाद—जब तक मेरी आधा

खिचियाँ

लेकिन फिर मुझे ख्याल आया कि अरविन्द अरविन्द है । मुझे थाक होने लगा अपनी आँखों और लीप की उस पीली रोशनी पर जिसमें सुगन्धना भी हो सकता था । थापद उसके गाल पर मसा है । कीड़ा भी हो सकता है । मसूर की दाँव तो नहीं है ? — एक के बाद एक ख्याल आया और मैं सोस रोके सुनना गया वह सोसो बकवास जो वह अपनी धीसिस के बारे में कर रहा था ।

और साँप से कोई सकता नहीं माँगना । कोई यह नहीं पूछता कि वह कम खड़ेरीला है या ज्यादा । वस साँप की एक ही सजा है कि उसका फन कुचल दिया जाय और उसे फेंक दिया जाय किधी गन्द नाले या कूड़े के ढेर पर—बील कउओं के लिये, सड़ने के लिये ।

वह कुशल दोम पूछता गया और मैं हो-हो करता गया । चाप का डेर बूँट बूँट का बूँट बनकर भरे गले से उतर रहा था और मैं सोच रहा था किम करर कमीला है वह, किम करर खलील । दोस्त का अगर दोस्त के साथ यह गुँक हो तो फिर यह दुनियाँ रहने के काजिल देरलिया नहीं । गजदल के ऐसे कौड़े का तो बरदेमी से मसल देना चाहिये । बोझ है ऐसे लोग बरती के लिये । पांडित्य के साथ अगर चरित्र न हो तो आदमी और मजिदर सप

मुँकस और देललल नहीं देललल मैं पक कर देम लेना सोचे दुपम कम में मने । चाप में मने मने मने मने मने मने । एक खाली मैं अरविन्द की मरक बड़गा और उरी सपप मुँकड़ी खजिली लेम मुँक मरक मने मने । उरीक मने मने मने एक दिक्ती लिपती मुँक थी ।

“तुम्हारे पास पर ये कष्ट है अरिन्द...”, कहे कर मैंने उस  
 विपकी मुँहें चौख की तरफ देखा। लेकिन इसमें पहिले कि  
 मरा देण वही पहुँचता, उसने अपने गाल पर देवकी रगड़ी और  
 अश्लिल स्वर के सफ़र चारों तरफ आ गिरी—यह गहरे गाल में  
 की टिकनी थी। लिफ्ट वही—हँसते वही ही जिसे मैं प्यार लगा  
 था अपनी पत्नी के लिये देखितार से।  
 मैंने अपने उस खूनी टिकनी की पूरे ही रही थी कि अरिन्द  
 ने अपना दुःख, जो कर्म से एक तरफ लिखक गया था,  
 सहेला—इस सफ़र से कि टिकनी उसकी जेब में आकर मैंने

सन्देह के लिये अब कोई गवायन न रहे गई थी। परम अगर  
 कोई था—एक दोस्त के बारे में और उस लिफ्टा के बारे में जो  
 मैंने जीवन-संगिनी थी—वही देखा था। वैवाहिक जीवन  
 के इन साल वर्षों में मैंने उसे बहुत करीब से देखा था। कभी भी  
 मुझे शकी-शकियत का कोई मौका नहीं मिला। मैंने देखा मैं वही  
 गया की तरह निमेष और परिवर्ण थी। लेकिन यह क्या हुआ !  
 गंगाजली में ही देखा है !

अरिन्द मैंने मैंने वही वही रतेन की कहे और स्वयं कोरी  
 एवम लान के वहीन सीधा वाक्स-स्म में गया। सेफ खोलते ही  
 मरा देण लिफ्टा पर पर गया। जीवन में पहिली बार आज मुझे  
 इसकी भी खतरा पड़ गई। देविदार जो कभी दोस्त के काम आ  
 सकता था आज उसकी काम नगम करने वाला था। मैंने उसे  
 भी देखा गीली की लिये

लेकिन फिर मुझे ख्याल आया कि अरविन्द अरविन्द है । मुझे थाक होने लगा अपनी आंखों और लेंच की उस पीली रोशनी पर जिसमें मुगलता भी हो सकता था । शायद उसके गाल पर मसा है । कीड़ा भी हो सकता है । मसूर की दाल तो नहीं है ? — एक के बाद एक ख्याल आया और मैं सांस रोके सुनता गया वह सांरी बकवास जो वह अपनी धीसिस के बारे में कर रहा था ।

और साप से कोई सकार्ड नहीं मांगा । कोई यह नहीं पूछता कि वह कम जहरीला है या ज्यादा । वस साप की एक ही सजा है कि उसका फन कुचल दिया जाए और उसे फेंक दिया जाए किसी मन्द नाले या कूड़े के ढेर पर — चील कूडों के लिये, सड़ने के लिये ।

वह कुचल धूम पूछता गया और मैं झिंझोकर गया । चाप का डेर बंद बंदर को बंद बनकर भरे गले से उतर रही था और मैं सोच रही था किम करके कमाल है यह, किम करके जवान । दोस्त का अगर दोस्त के साथ यह मुतक हो तो फिर यह दुनिया रने के काजिल दरलिया नहीं । ताइरान के ऐसे कीड़े को तो बरहेमा से मसन देना चाहिये । बोझ है ऐसे लोग बरती के लिये । पांडित्य के साथ अगर चरित्र न हो तो आदमी और मणिवर सप में अन्तर क्या है ?

सुन्दर और शैलिल नहीं सुन्दरता में फटक कर हम लोग रोने लगा लम में भी । लाम में क्या मयम भरे माप था । एक व्यापार भी अरविन्द को बरक बर्जगा और उशी समप भुंकाई मिलियां जैसे मुझ पर एक साथ टूट पड़ी । उसके गाल पर एक टिकती चिपकी हुई थी ।





खिन्नी बहती है

धरमतरला के चारों तरफ खिन्नी बह रही है। टांमां और बसों का तांता लगा हुआ है। उन पर बहने-उतरने वाले लोगों में मछली-यात वाले बंगाली हैं; गान-छोले वाले पंजाबी हैं; बुद्धू कहे जाने वाले बिहारी और मारवाड़ी महाराज हैं। मद्रासी हैं; यूरोपियन हैं। बाबू हैं; बुद्धू हैं। मजूर हैं; मुत्ताकाखोर हैं। बहुरंग हैं बेबायू हैं और हैं बावकट वाली आधुनिकायु-गोया कि हिन्दुस्तान की नसीं सं बहने वाले सभी तरह के बल सैरस हैं।

मेरे ठीक सामने पश्चिमी बंगाल सरकार का सचिवालय है। जिस पर न्याय, विज्ञान, कला और साहित्य की प्रतीक मूर्तियां लथारी हुई हैं। मूर्तियों के नीचे लेटिन में कुछ लिखा है, जिसका मतलब मैं समझ नहीं सकता। यकायक कलकत्ता की हड़ताल, जनता

सम की समीक्षा से ही है। १२ पर मुझे विश्वासिनी में-  
 प्रिय और आदर-पूर्ण विचारों से रच्ये है। अन्तर्गत से ही रच्ये  
 भी उन विचारों से रच्ये है। सीधे ही विश्वासिनी  
 का, भागीदारों के लिए-सीधे ।  
 मनाकर है ।

विचारों में ही आनंद से गुजर रही है ।

बापू वरक कुवलय का विचार है। विजली की केंवली से  
 प्राप्त है। पास रहें चायबाल से में एक आने की एक  
 कहें कि वही वरक कुवलय का विचार है। बापू की वरक कुवलय  
 आनी में एक नई समक धरा कर रही है। अपने चारों तरफ की  
 मगनच्यो इमारतों पर अगणित संपन्नताएँ, विजली की बलिनी,  
 वीर और विचारों से रच्ये है— "वरी का सभा सचिव अ-  
 गन च्यो", "गिरि की गीत", "लक्ष्मी", "प्रिय",  
 "प्रिय की प्रिय" और "लक्ष्मी" की वरक कुवलय के न जाने कितने

बलि रहते हैं ।

के. सी. राम की ईकान पर रहें रहें कृष्णों में लिखे हुए  
 "दीर्घागा" पर में ही दृष्टि और उसके साथ ही अपना श्रवण पर  
 मगन च्यो आता है। आनी में ईकान का भीतर लिखा उभरा  
 है। में वर कुवलय की लिख ली "अप" कहे के आते हैं, अन्त  
 की आनी से देता है। रमणुला की यह कोर भी लिखें समक  
 की कल्पना है। अभी मरा हुए आधी में लिखे हुए पत्ते की तरह  
 आता है और में आनी आनंद रीणगुला के संपन्नताएँ से

बला है और व लीन भापू की चिन्ता अपना ।

और वरकार के बीच आनंद ही वली कर्मकर्म के लिये में  
 विचार में वृम आन है। सीधे ही सीधेवाला की यह सीधे

लिखी रहते है

मरे पर प्रकाशक अमेरिकी सैन्य कक्ष के निकट आकर रुक गए हैं। मरी अखि अमेरिकी जननायकों के पोस्ट्रेस, अमेरिकी कन्स्टेबल और इफेक्ट अलग अलग हैं।

परफ विभाजन नजर आ रहे हैं—गोफिक उनको फाम, टेकनिक, को हुलकाव पुत्रवत्त को चुनौती देते हैं। यों मुझे अपने चारों वाली उन नवेलियों को जिनकी बोलियों का कसब और परबुओं के लिए खूले हुए हैं। मैं देखता हूँ खूनी होंठों और तेज नाखूनों देखता हूँ जिनके पट किक्षी नवायक के अर्धे की तरह हरे पैसे वाले मिठाई की दुकान, प्राविजन स्टोर्स, ज्वेलरी हाउसेज और रेस्तराँ कुतों से बाहर झांक कर महोजनी सर्वस्व का ऐलान करती हैं। कुतों वाले मारवाड़ी छिलों को देखता हूँ—जिनकी सुनहरी चनें प्रायः बार्ब मोगियों को देखता हूँ। मसुराइरड धोती स्निफिन सवव बूम रहा हूँ। बरबोर चल रहे और आने जाने वाले उजले आबारा की तरह बीरंगी-स्वयंवर की दुकानों के सामने बिना बाय का कुरहं लापरवाही से एकतरफ पटक कर मैं एक

किस बिटोरिया या एलवट की नजर गई है।

बनती है। मैं जानना चाहता हूँ बनती की इस कला पर कब उब से मंगल-कलश सजाती है; आम और अशोक से बन्दनवार चित्रांकन करती है। अनेक अवसर आते हैं जब वह कैले और महेदी और महेवर रचती है; घर के आंगन और द्वार पर संपदालय में है? बंगाल की हरे मारी कोहबर बनती है; से एक लुभयुक्त मूर्तियाँ गढ़ी जाती हैं। वे बिटोरिया के किस अगर यह जान है तो बंगाल में दुर्गा और सरस्वती की एक

बनती है।

हो सकता है बिटोरिया की भी कला से प्रेम हो गया हो, जैसे धन और पर से कितने लोग कला-प्रेमी बनने का दावा करने



दैकाम से उतर कर मैं नये विद्वत्तान की कल्पना करने लगता  
 हूँ। सिद्धरी, चितरंजन, नीलोबिड़ी, बंगलौर, हैरीफुड, मायराजंगल  
 और नवनिमिण के दैमरे मन्दिर मेरे मस्तिष्क में एक-एक करके  
 उभरते हैं। शब्द से मेरी सर झुक जाता है। विद्यास से मेरी  
 छाती फूँट जाती है। सड़क पर मजबूती से कदम बढ़ाये दूँगे मैं  
 मानो स्वयं आत्म-विद्यास की दृढ़ता से आगे बढ़ता हूँ। लेकिन  
 यह दृढ़ता, यह आत्म-विद्यास मुझे और कहीं नहीं दीखता—गोपिक  
 परमलला के चारों तरफ खिन्दी बहती है।



से केनवस और कौंसी में जुटा पाती ।

और खिन्नकला में गहरी खिन्न थी । रात को अक्सर मैं उसे तनमथता  
 मैं बड़े बड़े आँसू थे । बड़े लिखती थी और इसके अलावा उसे खिन्न  
 थी । नृत्य पर तो उसका विशेष अधिकार था ही और इसी के सिलसिले  
 नीला की प्रतिभा बहूँमुंखी थी । बड़े गाती थी । अच्छी गाती  
 निकाल लेती ।

पाती में किसी न किसी बहनें उससे रात में मिलने का समय  
 इतिहास लीटते समय एक असह्य पीड़ा सी होती और जब भी मौका  
 उसके पास आ जाती । आग की जब छुट्टी का समय होता तो मुझे  
 ही मेरा मन उघाट जाता और मैं लेक्चर के बीच ही खिसक कर फिर  
 बैठे रहती । उसके आगह पर मैं कलास चली भी जाती तो जल्दी  
 इतिहास से कालिज का बहना करके जाती और घण्टा उसके पास  
 मेरे दिन का अधिकतम समय उसी के सम्पर्क में बीतता ।

रही है ।

व्यक्तित्व में मुझे नीला की धृष्टता भी मिलकर महान हो  
 उठती थी लेकिन मुझे लगता था कि उसके तदी जैसे प्रवाहमान  
 उरु में भी चाहते लगी थी । हीनता की भी भावना मेरे मन में तो  
 पाव नहीं । लेकिन कुछ ऐसा जादू सा हो गया था मुझे पर कि मैं  
 आ गया । नकट्य में उसकी कमजोरियाँ मुझे स्पष्ट न कीं, बड़े  
 कुछ ही दिनों के सम्पर्क में हम दोनों एक दूसरे के बहने निकट

आगम निवास करती है ।

कलेज में कलाकार का हृदय और जिसके शरीर में सृजन की  
 भाव-भंगियाँ में नृत्य की मुद्राओं और कल्पना भाव है । जिसके  
 जिसके सांस के उतार-चढ़ावों में संगीत का स्रगम है । जिसकी  
 इन्सान से मिली है । ऐसी लड़की से जो सही मानों में इन्सान है ।  
 मैं उससे मिली । मिलकर मुझे लगा कि मैं पहिली बार एक





उसी दिन राम की अपनी साज-सामान बाँधते दूधे उसने कहा,  
 "सुंदरी गार्डी से बापिस जा रही हूँ आनि-निकेतन।"  
 "सुने कहा, "ऐसी बरदायी क्या है ? उठेरो न ? यह थकापक तुम्हें  
 क्या सुझ गया ? और अपनी तो गुस्सेरा खेपा आने वाला है।"

सुन लिया ।

को हम लोग पूछे न जुटा सकीं तो उसने अनिल के नाम एक बार  
 और एक दिन आठ-ऐकिसबीघन में जब योगी का एक चित्र खरीदने  
 लड़की नहीं है । अगर मैं उसने स्वयं मुझसे भी एक-दो पत्र लिखा  
 से कम न था, लेकिन मैं सोचती थी नीला नीला है । वह मामूली  
 वला दी क्या लिखा है । उसका यह खेपा मेरे लिये किसी पहिले  
 की क्या देती थी—स्वयं पढ़ती थी न थी । कहतीं तुम पढ़ लो ।  
 जब तक वह रही वह अपने अनिल का दर खत पहिले मुझी

पत्र की गुस्सी खोजता ।

की हँसी हँस दी । बोली, गुस्से दिखसकी है तो आगे से मेरे दर  
 निकन मारी की फिसासा में क्या न सती । अगर मैं नीला बच्ची  
 हद के बीच सवारी हो गया । न पत्र में फिर नहीं रख दिये  
 सोचती रही उससे इस बारे में कुछ पूछे कि न पूछे । इस दिमागी  
 मारी राज में सी नहीं सकी । पढ़ी-पढ़ी करवट बदलती रही ।

नीला के आरज्य में लिखा था, किसी फिसासा अगर न नहीं ।  
 नीला को लिये गये थे किसी ऐसी-वैसी की नहीं । क्योंकि इन्हें  
 में पढ़ा है । लेकिन मैं खत उन सबसे अनग-अनग था । क्योंकि ये  
 आठ में, घर भर की निगाहों से बचा-बचा कर उन्निहान की राती  
 देखे था । वह जो बाजार में निकले हैं उन्हे भी टैक्स्ट बुक्स की  
 की पढ़कने थी । मैंने पहिले भी अपने और फिसासा के प्रेम-पत्र  
 बार-बार पढ़कर भी मुझे रूचि न हुई । उनमें किसी के दिल  
 एक एक करके राज भर में मैंने थे मारी पत्र पढ़ खले । उन्हें

है कहे ।

उसने तबिके से जब निकाल-निकाल कर फर्श पर फेंके  
अपने ही नाम । पोटल स्टम्प देखोगी तो वहाँ सब गायगा ।  
यह पत्र भी मेरे अपने बिबे हूँ है । बापे दाय से लिखे है मीने  
है बहिन । अनिल नाम के किसी भी आदमी को मी नहीं जानती ।  
"नहीं । अब मी एक न संकोगी । मीने गुस्सेरे साथ छल किया

शुभम्

कमरे में बेचनी से चहलकदमी करोगी। उनीची सड़क से गुजरने वाली में गुम मुझे देखना चाहोगी। मगर अफसोस, हर बार तुम्हें नाउत्साही होगी। हर बार गुम धम से जाके चारपाई पर बैठ जाओगी। घड़ी पर बार-बार तुम्हारी नजर जायेगी। तुम्हारी कोपल और दिमागी बेचनी में समझ सकता हूँ। उस बच्चे तक गुम यही परेशान होती रहोगी और फिर थककर, ऊबकर, झुंझलाकर पढ़ रहोगी। पढ़े-पढ़े मुझसे लठने-शांजन के मर्मसे

उठ खड़ी होगी।

तुम्हारे दिल की धड़कनें तेज होती जायेंगी और गुम हेमशा की तरह से तुम्हें धम की सी चोट लगनी। घड़ी की टिकटिक के साथ तबकीरे उभरती रहोगी और फिर जब नौ बजेंगे, घड़ी के हर घण्टे करोगी। घड़ी की सुइयाँ रंगीली रहेंगी; तुम्हारे खयालों में मरी चुकी होगी। कुछ देर में नौ बजेंगे और गुम खाने पर मरी इत्तजार खतरा में आठ का घण्टा बजाया है। सोचता हूँ गुम खाना बना

खुशीं आप योशिया

मगल से मही किसी से पानी तक नहीं दिया ।  
 रजिस्टर में हम सब के नाम पर एक-एक खाने 222  
 मगर उसे वह भी नवीन न ही सकी । मैं जानता हूँ  
 जय रही है । एक बोर्ड के लिये वेधारे में पक्षी  
 खंड कर सभी ठंड और सीजनदार फर्श पर फेंक गये हैं ।  
 रोपनी बहुत धीमी और एक वंग से घरे में मरुत है ।  
 नहीं सकते, क्योंकि सीखने से धन-धन कर आने वाली  
 देवालय के अंदर में हम एक दूसरे की साफ वीर से देख भी

नहीं उनके बिना नहीं वेरीनकी से अहो जमाया होगा ।  
 गुहरी ही तरह परेशान होगी । एक अर्थ जम सीमाना भी है  
 थाया नहीं है । नीजवान है, पर पर थापद जकी वीधिया भी  
 भी कई लोग है—किया र लंक है, लिनके सरी पर थापद  
 नहीं है फिर भी परेशान तो हूँ ही । इस वंग भी कोठरी में  
 परेशानी से इच्छित्य में गूँह दयाय पड़ी हो । मैं मही गीक  
 कभी वेधारी है ; गुम घर पर अकेली ही । थापद इच्छित्य

सपक कर अपनी वही में गूँह सगद नहीं सकंगा ।  
 उक्त ; उस तक दरवाजे की ऊँची चढ़ाने के लिये मैं नहीं  
 मैं मजाक कर रही हूँ; गुहरी रोव में मरी वीधारी वन्द  
 पूछोगी, "कौन ?" जवाब में सिर्फ दया मनसगियोगी ।  
 से सपक कर गुम दरवाजे तक आओगी । रोव की तरह कडक कर  
 गुम चोक कर जग पड़ोगी । सीधोगी मैंने दरक ही है । जल्दी  
 देवा से ख ही रही है । पर का बुद्धि दरवाजा थापद वरमरी  
 वेधारी ही जायगी । गुहरी भी अति ऊँचमंडल कर रहे जायगी ।  
 खाना ठंडा ही जायगी । मही रोपनी अकड जायगी । दाल  
 से सगलार वीधार होती जायगी ।

बांधती रहोगी । रात घनी होती जायगी और गुहरी पलक नीद

नहीं होवे कि कायदे से कुछ खरीदारी कर सकें ।

वेधसी—लेकर लौटाते हैं क्योंकि मेरी जेब में कभी भी इतने पैसे एक मुकाम की उम्मीद लेकर जाता हूँ और वहाँ से एक वेबकी—एक आरामदायक होता है । तुमसे क्या छूपा है । हर बार कुतूहलाने से नहीं हो सकता ! फिर भी शीशे की अलमारियाँ से उन्हें देखने से ही करता हूँ । माना कि बिना मतलब वने लगेखरीदियों से किताबें खरी पैसे न होने पर भी मैं किताबों की दुकानों के चक्कर लगाया बैठता हूँ । अन्दर का जैसे कोई स्थान होता ही जाता है । जेब में अच्छी किताबें देखकर न जाने मुझे क्या हो जाता है । सुधुबुध ही गुम जाता ही किताबों के लिये मुझमें एक कमजोरी है ।

हे—मेरे खिलाफ सचमुच यही इल्जाम लगाया गया है ।  
चोरी ! जिसके लिये लोग पड़ते हैं, जलाते होते हैं, सजायाते होते हैं। तब जो मुँह, गरीबी और पामाली में भी नहीं झुका—झुक जायगा । अन्धकार में फकड़ मचा हूँ । धर्म और न्याय से गुन्हाही करने—बद फौर फौर से किसी एक गुन्हे परा चलेगा कि मैं चोरी के में सभ्य भक्त हैं तब तक गुन्हाही सिपाही खोजे तथा हौशी ।  
दोषी ! दो-दो बार-बार बुराई हीरे और भय में ताजाकरों करी । अपना काम-पाम झुंझकर ठहरने पर तर-ताजाही की बंधनार बुरे कर बिंद-बन्दर को चीरे आये । और यही शीमे पड़ने की सामय आये हीरे बंधनी । शीमे के लिये ही शीमे काम-गम झुंझकर मेरी फकड़ में फकड़ कर गुन्हा-गुन्हा ही बंधनी । शीमे की मैं गुन्हे बड़े धरत लिखते कि मैं लिखता कर लिखा गया हूँ तो तुम हे फिर गुन्हाही खोल न चोरे । और गुन्हे या फिर मैं सब गुन्हे आने लिखते गुम गुन्हा गुन्हा गुम म पा कर फौर बंधनी । गुन्हाही लिखलिख के भरे लिखते मैं खरत रहूँ । यार मैं सब भी गुन्हाही खोल कर-कर ही मुँहा गुन्हा हीरे गुन्हा हीरे लिखा फकड़ । न

सबसे पहले बड़े बड़े लोग ।”

और परिणाम की बहुर-व्यतिथि इतिहास नहीं है कि उनके नाम विषम-  
जापान, बाली, यथा, हिन्द और गतिक्रान्त, लका और हिन्दोसिया  
मैंने कहा, “यह किताब अब से यही नहीं खरी जाये । चीन

नहीं मानी । अम इसकी सेल का बास्ते रखता है ।”  
है आ नवर आया । बाली, “ये किताब इसी माफक रहेगा । इतना  
उससे इस बारे में फिर कहो तो उसका सीर-सरीका एकदम बदल  
मेरे कड़े पर अमल करने का वायदा करो । लेकिन आज जब मैं  
या । इतना ही स्थिति पर अकसमस जाहिर करती आती थी से  
है । उस न बड़े । हेर बार वह आनरायत कहे कर मुझे टाल देता  
बारे में मैं सीर-सरीका से कड़े बार कहे चुका था कि वह उस बड़े से  
अमरीकी किताब पुरानी थी—व्यतिथि आफ परिणाम । इस किताब के  
में पूरा पडा । कुछ किताब नई थी मगर ऊपर वाले खाल में एक  
तो मुझे खाल आया कि सामने वाला शीकष ही देखा ही नहीं ।  
पुस्तकाला रहे । लेकिन यही वक्त जब मैं दूकान से उतरने लगा  
आज भी यही है । करीब डेढ़ घंटे तक मैं किताबें उतारता-

उसका पूरा-पूरा कायदा उठता है ।

जिस दंग से वे किताबें निकाल-निकाल कर देती है मैं हमेशा ही  
अपने कस्टमर को खूब करती जानती है । उससे वे ऊबती नहीं है ।  
की सेरमनशुध के तरीके पता नहीं गुम जानती ही था नहीं । वे  
हेर बुजान में यही कैस्टे पब्लिकेशन मिल जाता है । अंग्रेज लंडनियों  
सबसे जानदार और बड़ी दूकान भी तो यही है । हेर मजबूत पर  
बाले का मकसद ही पूरा नहीं हो सकता । धेरे में किताबों की  
गया था—शुद्धिक मेरे खाल में यही जाये बिना तो कर्तव्यवृत्ति  
में नई-नई किताबों के पाने पवत चुकने के बाद मैं प्रियिष्ट वृक डिप  
हेर दूकानों आज भी मैं सरेधाम से यही था । और दूकानों

को यों सरेबाजार बेइखत न होतें दूंगा ।

गुन्दारे प्यार और धरती की सीमाय है मुझे, एशिया की चहेन-बेटियाँ  
रख सकेंगी । यहाँ से निकलते हो मैं फिर उस दूकान पर जाऊँगा—  
मेरा ख्याल है कार्मन की दफाएँ उस कितल की चहाँ सुरक्षित न  
खिलाफ ताजोराल हिन्द की कई दफाएँ आयद हो चुकी है । लेकिन  
मुझे यहाँ तक लाया गया है और अब मैं देवालात में हूँ क्योंकि मेरे  
फलायंग स्वयं चढ़े चढ़े कहे से तक पडा । पुलिस के सगीनी पदरे में  
इस बीच यहाँ कितने ही लोग जमा हो गये थे । खूदा जान

गरेवा पर मेरा होय था ।

मेरे दोषों में पहुँच कर चीर-चीर हो चुकी थी । उस गारे के  
मेरी वही हुई मुझे शोकस पर पडा । दूसरे ही क्षण वह कितलव  
उलगा भी जानता हूँ । उसकी बात आयद पूरी थी न हुई थी कि  
विशवासी, मान्यताओं और स्वाभिमान के लिये खूद की खतर में  
हुम जानती हो मैं ऐसी भाषा सुनने का आदी नहीं हूँ ।

“यों मैं आउट ।”

“दाट अप मैं खड़ी एशियाटिक,” उसने गुरीतें हँप कहे, “आपल

खूदतल आप एशिया ।” मैंने उसे अँधेरी में ही उठा ।

मावतली मैं धीपुन खोट हेव आइज दू सी एण्ड एशियाट द रिपल  
“इट इज द परब्रिग्टी आप एंटी-अमेरिकन आउटयूक ।

कर कहे ।

“दाट दे गार द खूदतल आप एशिया ।” उसने अँधेरी



के लिये छटपटाती सी जान पड़ती है। यही कारण है कि वेधारे  
 आग बरती है और जब तब धीरे-धीरे में सड़क को निगल जाने  
 लहराती—धलधली—चमचमती—जगल लहरों से फुफकारती  
 डरबनी लगती है। गोमती की टूटी-भंगी धार, गगिन की तरह  
 बारिश की अंधरी रातों में यह रास्ता सचमुच ही बड़ा  
 दिमाग पर डरोती होती लगती है।

घना होती जाता है, बूँसे बूँसे एक अनाव सा भय उनके दिल-  
 सेकर धर की राह लेते हैं, क्योंकि संक्षिप्त का धैर्यका ज्यों ज्यों  
 देती। सूरज छिपने से पहिले-पहिले चरवाहे अपने हीरे बकियाई  
 है। जास कर रात में यही मनुष्य की छाया भी नहीं दिखाई  
 सड़क का यह तीन चार मील टुकड़ा एकदम सुनसान सा रहता  
 की दिशा एकदम बदल सी जाती है। दरिया के किनारे-किनारे  
 भूसा ऊँच के समसान से बेलीगारद के कबिलान तक गोमती

किफातिया टव

“जी हाँ, और यह भी सच है... परमात्मा का...”

“जी हाँ, और यह भी सच है... परमात्मा का...”

“जी हाँ, और यह भी सच है... परमात्मा का...”

“जी हाँ, और यह भी सच है... परमात्मा का...”

“जी हाँ, और यह भी सच है... परमात्मा का...”

“जी हाँ, और यह भी सच है... परमात्मा का...”

“जी हाँ, और यह भी सच है... परमात्मा का...”

“जी हाँ, और यह भी सच है... परमात्मा का...”

“जी हाँ, और यह भी सच है... परमात्मा का...”

“जी हाँ, और यह भी सच है... परमात्मा का...”

“जी हाँ, और यह भी सच है... परमात्मा का...”

“जी हाँ, और यह भी सच है... परमात्मा का...”

“जी हाँ, और यह भी सच है... परमात्मा का...”

“जी हाँ, और यह भी सच है... परमात्मा का...”

“जी हाँ, और यह भी सच है... परमात्मा का...”



पानी से तर किया । और धीरे-धीरे हरीश का मुँह पोंछा ।  
 सूखा नहीं था । अचरक ने जब से कमाल निकाला और इसी मुँह  
 काफ़ी देर पहिले भी बारिश हुई थी । सड़क के गड्ढों में पानी अभी  
 बिगरी जाँ पर आ टिकी । पल भर वह कुछ सोचता सा रहा ।  
 अचरक ने इधर-उधर निगाहें दीं और फिर उसकी आँखें  
 माया पसीने से तर हो रही थी ।

धरती पर पड़े थे बिगरी जाँ—हीथ पॉव डीले, बेहिश-बेखबर ।  
 हेलकी कुँडार पड़ रही थी । आकाश में बादल घुमड़ रहे थे और  
 दीहरीय । बँदाबादी अभी आरम्भ नहीं हुई थी । रहे-रहे कर  
 क्षण भर उत्तर की प्रतीक्षा के बाद उसने फिर वही शब्द  
 कहा, "यहाँ बात है बिगरी जाँ ?"

"बिगरी", हरीश की उठते हुए अचरक ने भरदुई आवाज में  
 सड़क पर गिर पड़े ।

सहसा उनके मुँह से एक जोरदार चीख निकली और वे उसी क्षण  
 फँसने लगे । बिगरी जाँ उस दीड़ में कुछ आगे निकल गये थे ।  
 झुक कर दिया । दिनों की घड़कन और भी तेज हो गई । साँस  
 करता चलता आ रहा हो । न जाने क्यों दोनों ने धरतीहट में दीड़ना  
 डप-डप की आवाज गड़ने साफ़ हो गई । लगा जैसे कोई पीछा  
 "न", उसने मरी सी आवाज में कहा ।

"ताड़ ?" अचरक ने चंस्टर की जब टलीते हुए फिर हिलाया ।

"ताड़ बाध हो ?"

"फिर ?" अचरक बोला ।

बधुन हो उठे ।

"वह तो इसी तरफ़ गड़ रही है ।" बिगरी जाँ और भी

"आवाज तेज होती जा रही है ।"

"है !" और बिगरी जाँ ने धार की तरफ़ काम फंसाया ।

उसका यह दौबला निबारी जो की भी जीवत ही जान पड़े ।

"देख लो इसे भी ।" अयस्क ने बिजो से कहा ।

बादी धम गढ़ और उन्होंने एक दूसरे पर अंधधुंध टाँट बनाया ।  
 की निगाहें धम गढ़ । कुछ देर वे याँ ही मौनता खड़े रहे । बाँटा-  
 धार में दृश्य के स्वर धमः उभरते लगे । अयस्क और निबारी

लगे । दृश्य और मस्तिष्क पर छाया अधेरा भी ।

सत्य की साकार रूप में देख लिया । देवा के साथ-साथ वादल धुँदले  
 निबारी फिर धमकी और निबारी ने उसके शक्ति प्रकाश में

मिठी का धरे ।"

कर दिया । पूर्व दृश्य पीछे की न जाने क्या-क्या समझ वता, मरा  
 "बाहे रे निबारी", अदृष्टस करते दृश्य उसने कहा, "कमाल

और अयस्क के मुँह पर प्रथमता की लहर भी दौड़ गई ।

सहसा वादल की गरज के साथ-साथ निबारी धमकी ।

में आ फसे ।"

"आँखों का धम नहीं है ।" अयस्क सोचते लगे, "कहाँ मौनता

"एक... दो... चार... पाँच... निबारी ने एक-एक कर कहा ।

नीचे कोई छाँट ही दिखाई पड़ रहा था ।

अयस्क की आँखें और भी फूल गई । सधर्मव ही दरखाँ के

लखड़काने ।

"स... सफ़ेद... कपड़े... कपड़े... निबारी जी

"कहाँ है वह ?"

"मौन के पास ।" अयस्क ने अधेरे में दृष्टि फँसाते दृश्य पूछा,

"मौन... के... प... पास ।"

का प्रयत्न किया ।

"कहाँ बाह है निबारी ?" अयस्क ने संशयो देकर जवाब

उसने आँखें खोली ।

प्रदर्शित की।

“युक्तियुक्त। वज्राकारमात्र है। मरुत से कश्चित्काल का रस्ता है कि मज्जा।” अथवाक ने लज्जित अर्थात् में गम्भीरता

“यार तुम न होते तो.....”

“रस्ता कैसा है ?”

“यथा ज्ञान है निवारी तो ?” अथवाक ने छुड़ते हुए कहा,

की धार अथ भी उनके साथ-साथ चल रही थी।

चले जा रहे थे, जैसे ऐवरेट्ट विजय कर के जाते रहे हों। नदी और उसकी अंमल श्याम में वे दो राहगीर, लम्बे-लम्बे पग बंधे थे और अन्त में भी साफ नहीं हुआ था। ऊपर सिवारों का काफला से सिगरेट धुम जलाई अलविन का चिराग जला दिया।

“यारों की नौका-विद्यार भी कैसे मर्तल में सुझा है। मजिब

है आपकी दिखती।”

“और जनाव उर गये उसी से”, अथवाक ने शिकायत की, “ये

निकली चढ़िया।”

“घबरे की”, निवारी ने कहेकहा जगामा, “खोदा पड़े।

सहसा दोनों विचलित कर रहे पड़े।

दो इस उकटकी जगामा देखते रहे। कई मिनट बीत गये।

काली नहीं थी। सकुट-सकुट से दाम स्पष्ट दिख रहे थे। वे दोनों ली बीम की तरह लज्जित और शान्त हो गई। श्याम एकदम की सपाट सतह पर रंगीत नजर आई। अग की एक छोटी सी अन्तल के साथ-साथ एक देखकर काली श्याम उन्हें पानी लख भी तो ऐसे ही होय आते हैं।”

“मजब संकल्पित के समूह निकल में भी तो यही पूरा श्याम है”, उन्होंने मन ही मन कहे, “निराशा में आशा और रहस्यों में

“कैसे यकीन दिलवाऊँ मैं है ? जब तेम आना सीर आवागमन ही नहीं मानते तो.....।”

अचरक ने कहकर ही बगवा ।

“तब ठीक है । बड़बल का मुँह से पता पड़ गया है तो !”

है तो ही तो ही !

“ये मैं क्या जानूँ !” विवासे जी ने चौकते दूँ कहते, “अप-”

“नाक-नका ?”

“वीस-बाईस की बताते हैं । आइ. टी. में पढ़ती थी ।”

किता ।

“क्या चरम थी ?” अचरक ने धीमे-धीमे के लहजे में सवाल

किया ।

“यह समझने लड़कें हैं न । इसी में एक लड़की की लाना बरामद

“क्या हुआ विवासे जी ?” अचरक ने मुँह बगवा ।

का बगवा थापर मुँह मानस नहीं ?”

अच्छे हेकड़ थी यही आकर सारी चौकड़ी भूल गये । पिछले कहे

“जी धरनापू पूने पढ़ी-सूनी है उनसे साफ जाहिर है कि अच्छे-

सामने धीमे-धीमे टिक कर ही सुकती है ?” अचरक मुँह बगवा ।

“अपना-अपना अकीदा है विराट-मन । भला खड़ा है तोकाली के

तो..... न जाने क्या से क्या हो सकता था ।”

धीमे पढ़ें हैं । वह तो कही मैं हिज्जाम बालीसा पढ़ता रहा । नहीं

“बैकैम ही नहीं अचरक, राहगीरों की जिन्दगी से दोष तक

है । यही क्या कम है ?”

“अरे सादेव ! अच्छा छासा आता ही यही बैकैम बन जाया

है अरे !”

“मजाक नहीं अचरक ! इस रास्ते में कुछ न कुछ अनावला

भी बजाई ।

सुमकार कर उसने उन्हें बुलाना चाहा । एक दो बार मुँह से सीटी से सुनाई पड़ी । हूँसी-मसखरी उसका स्वभाव था । खीर-खीर से जब से सिगरेट निकालते समय, अशरफ की कूनें भीकने की आवाज खड़बड़ाने लगी थी । बेलीगारद का कलितरान अनकरौब था । रही थी । वृं वृरी तरहे कांप रहे थे । पत्तियाँ असाधारण रूप से देवा कुछ बेज हो गई थी । गीमती में बड़ी-बड़ी लहरें उठ

“निकतना डरपीक आदमी है ।” अशरफ ने मन ही मन कहा ।

जी आँखों से ओझल हो चके थे ।

सालीस कदम के फासले पर । अशरफ ने घूम कर देखा । तिवारी तिवारी वार्ड का घर बारा बाल से था । तिराहे से कोई तीस

“तब फिर आदाबखर्ज ।” और अशरफ ने घर की राह ली ।

“मैं इतना कमखोर नहीं हूँ ।”

दवाते हुये एक और तीर खोजा ।

“डर लगता हो तो घर तक पहुँचा दूँ ?” अशरफ ने हँसी

“तुम्हारी मर्जी, कहीं अकले-अकले भटकते फिरोगे ?”

असलम गया तो है गालीपर ।”

“अपने लिये एक ही काफ़ी है । आजकल में आने वाली है ।

“बाबू दूध की ? न भाई ।” अशरफ ने हँसते हुये कहा,

पीकर चले जाना ।”

“आधा न ।” तिवारी ने तिराहे पर ठिठकते हुये कहा, “बाग

“पंडितियन जी तो हैं । और आपका दरदालत भी करीब है ।”

पही बात है न ?”

“बाग साहिब नहीं हैं, इसलिये और भी बेगाम हो रहे हो ।

बन्द, मुल्ता-मीलवी भी कटे-कटे रहते हैं ।”

“बन्दा तो धैरानियत का गुलाम है, जिसमें खड़ा और खड़ा के



अच्छा लगाया ।

“मुझको है विजली की चकाचौंध में पलों की परछाइयों  
के पड़ोसी कँठियों की शक्ति अस्त्रियार करती है।” अशोक ने  
की पलकें खिंचे देते हैं।

“दिल में अब खोफ धर कर लेता है तो क्यों की भी शान  
“ये तो क्यों के शरीर है !” चलते-चलते अशोक गुनगुनाया,  
ही गया ।

सहसा विजली चमकी और कब्रिस्तान का रस्य स्रस्य  
बादल रहे रहे कर मरज रहा था ।  
दिमान में घूम गई ।

चकराया । शरीर कांप उठा । एकदम न जाने कितनी घबरे उसके  
कहा । दूधकाकार मुँहियाँ बँधी ही खड़ी रही । अशोक का सिर  
“कौन ?” अशोक ने हाथ की मुँहियाँ कमरे जैसे रोव से

कितने ही घड़ें दिखाई पड़े ।  
का नीचे । कर्तों के बीच सफेद और मटमूँछ से लबादे ओढ़े हैं  
काला हो गया । काटी तो लूँ नहीं । ऊपर का मांस ऊपर, नीचे

सामने कब्रिस्तान पर जो निगाहें पड़ीं तो अशोक के दोष  
से कहा ।  
“यही तो कुछ भी नहीं है । सीली फंकते हैं ये उसने आशय

रहे गया । फिर वही अंधेरा । अशोक ने मर्मिषण जगई ।  
सँकड़ी छिटी नसल के पड़ोसी कैसे दिखाई पड़े । कलेजा धक से  
अकाम में विजली चमकी और अशोक को अपने इर्द-गिर्द

की आँसू ली ।  
कई सीलियाँ खराब हो गईं और लव उसने शान के एक पं  
और रोगिणिकाटी ।

मस्तिष्क में घूम रही थी अनेक घटनाएँ,—एक से एक रहेसमयी  
यह अकल्पान उसे न जाने क्यों, कुछ खल भी रहा था ।

दल-वल मव गई ।

आई, पिता उसी समय ऊपर के कमरे से लपके । क्षण भर में अथरक की विणी और फिर की आवाज सुनते ही उसके

की ऊँचाई को छू रही थी ।

इसलिये दीवार पर पड़ने वाली परछाई भी आदमकद न होकर छल दीप के कोने में मिट्टी के तेल का एक लैम्प टिमटिमा रहा था ।

दरअसल कमरे की वनावट भी बड़ी विचित्र थी । दाहिने दरवाजे की बगल वाली दीवार पर एक दैत्याकार छया हिलडल

रही थी ।

कमरे में पूरे रखते ही अथरक के मुँह से चीख निकल पड़ी । एक अनाल सा भय लमड़ पड़ा ।

कोई चोर-चोर तो नहीं घुस आया ?" और उसके मस्तिष्क में

रात गये दरवाजा बंधोकर खला है ? कहीं इस आंधी-गानी में "बात क्या है ?" अथरक ने सशक्तित होते हुए सोचा, "इतनी

भँबल आ गया है ।

गये । सहेन में सरा सामान अरत-थरत पड़ा था, जैसे घर में घर के दरवाजे पर दीप रखते ही फिवाड़ खड़बड़ा कर खल

काला सीधा सींगे के अंधरे की रो रहा था ।

साहेब नाक दबाये आगे बढ़ गये । स्ट्रीट लैम्प का चटका हुआ गोल चौराहा आया और पनली गली की गलजल में अथरक

में भी महनकय मजदूरी पर देवी रहती है ।

समान भी कहीं बेवसी हो—बेवसी जो कड़के की सड़ी और लैम्पट टलीफोन के लम्बे आंधी-गानी में भी निरखल लड़ें थ, जैसे उनके

काठिया खुद ही गई । बिजली की चिन्ता समझमा रही थी । रोडवेज बकशप की इमारत पर करते ही बड़े लोनों की

".....तो ही है।" वह बोले।  
 "आर्य विद्यार्थी तो चारपाई पर बैठे सोच रहे थे, "अच्छा ही  
 हुआ, जल्दी के पीछे-पीछे चला गया।  
 वह देखे ही गये। असलम भी यावज की तरफ कर्णधारों से देखता  
 "भाग कहे का।" वह भी मुस्कुराते हुए खड़ा हुआ।  
 "हैर की मुगलान ही था।" कर्ण धारों ?  
 "भाग ही तो ली है।" असलम ने हँसते हुए कहा, "भाई,  
 फिर बोला, "यही तो कब आ गये ?"  
 अर्ध खोली। धन भर भीषणता से वह देखे-देखे-देखे रहा।  
 वेगम साहिब की बात सुने भी न ही पाई थी कि अचानक ने  
 "हैर खोली गयी, "यही तो अभी-अभी खोली गयी है।"  
 "यही तो फकत में ही थी," अचानक के मुँह पर पानी छिड़कती  
 था.....  
 "वही सलीमा", वह भी गी ने आश्चर्य से पूछा, "वह  
 सलीमा ने मुँह पर पानी के छीटे दिये।  
 "यही फकत है सलीमा से, 'वह ल-वह ल-वह ल' वक रहा।  
 अचानक ; क्या हुआ है ?" वह भी गी ने उसके फिर पर

धर लौटते वक्त भी जनता का वही हाल था। कभी दायें  
 चलते, कभी बायें और कभी हमारी टांगों के सामने आकर। कई  
 बार मोटर-गाड़ियों के नीचे आते-आते वया। कमबख्त खूद ही मरना  
 ही, हमें भी साथ ले डूबता। और कालीनी में तो उसने रास्ता  
 दुंधर कर दिया। लाख सुमकारी—भला वह कब मानने लगा।

यथांकर ही सकता था ?

लेकिन इससे इन्हें क्या ! किसी ददुंधरे गीत का असर भी इन पर  
 लगा रहे थे कि आखिर इन्हें हुआ क्या ! फिरम दुखान्त खरुर भी  
 हुआ मगर टामी साहब की बेकली बदस्तूर रही। और हम अटकलें  
 अलग हट मथे और भी मथे पुराने ठरें पर। जैसे-तैसे भी खलम  
 प्यासा होगा। कलर का ठंडा पानी दिखाया तो जनता सें के  
 बदबख्त ने पिचर का सारा मजा फिरफिरा कर दिया। सोचा  
 इन्टरवल के बाद से ही टामी कुछ व्यय नजर आ रही था।

टिकिया टिकिया



सकता है। और अगर हमें फाके और खिलने से डरना पड़े तो  
 बसना। इतना कहें तो हमसे क्या और मुहंजिर का सफा सौदा  
 पर हमसे लड़ाईयाँ नहीं होतीं, हमसे कोई ऐसी शक्ति नहीं  
 जो भी हम सबसे बहुत मजबूत नहीं है, अतः ऐसी शक्ति  
 धर करती है। आदिपति की शक्ति है—हम में शक्ति और  
 फिर भी हम दूसरों के दुःखों पर पतने और मुहंजिर की शक्ति  
 को अपने-अपने काम से अपना-अपना काम अदा करते हैं। लेकिन  
 हमें नहीं, "हम लोगों में ऊप-नीच नहीं होती। दुनियाँ भर के  
 "पानी कहीं की।" शक्ति में पति के लिए पर अपनी जमाने  
 होना, कहीं हम।" पति में बसती में नहीं।

"ठीक तो कहेंगे।" कहेंगे कि शक्ति में शक्ति पर शक्ति नहीं  
 शक्ति है और वह कि शक्ति में शक्ति पर शक्ति नहीं।  
 शक्ति है कि हम सब शक्ति को शक्ति, शक्ति को शक्ति, शक्ति को शक्ति।  
 "शक्ति में शक्ति, शक्ति में शक्ति, शक्ति में शक्ति।"

"शक्ति में शक्ति, शक्ति में शक्ति, शक्ति में शक्ति।"  
 "शक्ति में शक्ति, शक्ति में शक्ति, शक्ति में शक्ति।"  
 "शक्ति में शक्ति, शक्ति में शक्ति, शक्ति में शक्ति।"  
 "शक्ति में शक्ति, शक्ति में शक्ति, शक्ति में शक्ति।"  
 "शक्ति में शक्ति, शक्ति में शक्ति, शक्ति में शक्ति।"  
 "शक्ति में शक्ति, शक्ति में शक्ति, शक्ति में शक्ति।"

दस दिनों के लिए अपने ईर्ष्या के लिये लड़ने के बजाय दूसरे-परिवर्तन में प्रकीर्ण करने है।"

"लेकिन मैं नहीं चाहती कि तुम्हारी सेहत खराब हो, तुम्हारी बच्चा-परम्परा और कुलीनता को बर्बाद न हो।" पत्नी ने मुँह भरकर उत्तर दिया।

"कुलीनता का राग अलापने से कोई कुलीन नहीं होता और नाहीं बड़े घर से पैदा होने से। कुलीनता और सेहत के मैं उपदेश। मैं तुम्हें कहना नहीं चाहता था, पर तुम्हें क्या छुपाऊँ—कि मैं से कहना नहीं। घर की बात है। तुम्हें दायर मार्गम नहीं हमारे मालिक साहब दावर्वा की बीबी से... मैं पूछना हूँ तब कुलीनता को बर्बाद नहीं लगता। तब उन्हें बीमारी नहीं लगती।" दासी ने तब तक कर कहा।

"मैं हीत ही ऐसे हूँ। तुम्हारे मालिक का क्या ? हमारे बच्चा मीनता की ही लो लो। कम्बल पचबल्ला नमान पढ़ता है, हाथ भर की दाही लिये लिखा है और बेरा मटियादिन से आरम्भ है। किसे है।" पत्नी ने राग जाहिर की।

"ठीक है, लेकिन सब मर्दा की दायर देना नामुनासिब है। आदमियों में भी सब तरह के हैं। सब को एक उड़ से कैसे टिक सकता हो ? और फिर औरतें किस से काम हैं ? दूर क्यों जाती हो, मालिकन की ही देख लो। साहब भाषी-भाषी रात तक कतब में रहते हैं, महीना के लिये दोरे पर चले जाते हैं और बगम साहबा रहमान से इत्तफा करमाती हैं। दलियाँ दफा में खूब उन्हें एक ही चारपाई पर देखा है। मला बतलाती तब कुलीनता की बर्बाद नहीं लगता ? तब बीमारी नहीं लगती।"

कलकत्ता

लिनियल उल । बंश ही हम भूतों में बलवानों में ही पाएगा है  
 उलर कि दोनों के दोनों भाग पर ही और शक्ति में ऐसे ही  
 यह जैसे उलका की ही बकर ही में रखा है । बलिन उलकी बल  
 बल देर तक उलर लियाम में रखा है ।  
 बंशर उल उलम शक्ति बंशर उल ही बंशर उल ही बंशर उल ही  
 नवर आ रही थी । बंशर, "उल नमकदराम कुत की निकल  
 बाहर किये । मैं उलका में ही बंशर उल ही ।  
 शरीर उल शेष उल है । यल भर को उल का कटक उल  
 पत्र रही और उल लिनियल में कुलवारी की क्या उल उल  
 कर ही है ।"

और हम बंशर को, कहीं ऐसा तो नहीं कि यल की उल  
 लगी और पत्ती की बल सुनती है ।



אשר יצאנו ממצרים ואלה שמות ימינו  
אשר יצאנו ממצרים ואלה שמות ימינו

אשר יצאנו ממצרים

אשר יצאנו ממצרים ואלה שמות ימינו  
אשר יצאנו ממצרים ואלה שמות ימינו  
אשר יצאנו ממצרים ואלה שמות ימינו  
אשר יצאנו ממצרים ואלה שמות ימינו  
אשר יצאנו ממצרים ואלה שמות ימינו

אשר יצאנו ממצרים ואלה שמות ימינו

אשר יצאנו ממצרים ואלה שמות ימינו  
אשר יצאנו ממצרים ואלה שמות ימינו  
אשר יצאנו ממצרים ואלה שמות ימינו  
אשר יצאנו ממצרים ואלה שמות ימינו  
אשר יצאנו ממצרים ואלה שמות ימינו

אשר יצאנו

वही टोले-टोडकी और कुलावारी की साया से बेटी दमईलाल  
अक्षर हो गया ।

रेक्टरों की सूची में सेठ छदासजीलाल के सुपुत्र दमईलाल का नाम  
सेठ जी उदारप्रियकारी की विना से मुक्त हो गया । अनेक जय-  
जाकर सेठजी की कोख फली । सेठ जी की पुत्ररत्न नाम हुआ ।  
काशिया चल रही थी । ऐसे ही बरसी गुबार गये । सब कहो  
आशा-भाग से लेकर देश-विदेश बड़े से बड़े कौम जगदर सेव की  
उपवास, सामर्थ्य भर जी बनवा था कर रहे थे । साइफैंक वाले  
पुन-रत्न की प्रति क लिख जीम, जप, दान, पुण्य, पुजा, पाठ, यत,  
मनोदया भली प्रकार समझते थे मगर बेचारे करते भी क्या !  
अक्षर वे सेठ जी की कुरहली, लीने मारती । सेठ जी उनकी

बैसाव निःसार जान पड़ता था ।

साध-संनान की इच्छा लिए । इसके विना उन्हें अपना सम्पूर्ण  
साँझ तक करवा-चीप ऐसी सीधी बड़ी रई-गीवन की एकमात्र  
कोई काम था तो वस यही कि निव नये खेर गढ़ल और भीर से  
जात बौद्ध, गौकर-गौकराविधि की छोटन-फटकारी के अलावा उन्हें  
संनानों की इजाजतें पकड़म निव थी । पढ़े-पढ़े धाने,

आपसी की भला उन सबके लिए प्रस्ताव भी करते थे ।

इसीलिए वे ऐसी धानों पर कमी लाग रहे थे । कामकाजी  
सेठ जी के जग-गर्ब पर इतना कोड़े अक्षर न पड़ता था और  
थे, जिन्हें लेकर अक्षर संनानों की इजाजतें थी । बड़े-बड़े  
पड़ता था । एक दिन 'अक्षर' का नाम ब्रह्म ब्रह्म ब्रह्म गौकर-गौकर  
रहे जाता । अक्षर गढ़े ही गढ़े ही गढ़े ही गढ़े ही गढ़े ही गढ़े ही गढ़े ही  
गढ़े गढ़ते जाते । अक्षर के नाम अक्षर पर के काम की नहीं  
हिएरती का नाम गढ़े ही गढ़े ही गढ़े ही गढ़े ही गढ़े ही गढ़े ही गढ़े ही  
गढ़े ही गढ़े ही गढ़े ही गढ़े ही गढ़े ही गढ़े ही गढ़े ही गढ़े ही गढ़े ही गढ़े ही

स्वभावतः सेठ-सेठानी का दिन-दूनी रात बीगानी बिना खाने  
 लगी । उनकी चमरे में आँसू का सा पुरी है ही वही की  
 बीगानी बीगानी महीन न है । सेठानी दिन भर कोशिश करती ।  
 बच्चा खान से उठती बात खिन्नता, बाल-सुनन खेला करता—  
 भील-भास के डोरे करता, हैसल, मुँहकरता, रोता, बिचलता,

है, खाने सवाल करता है कि सुनने वाले लोग आ जाए ।  
 करना दरकिनारा अच्छे खासे माफ़ा देने लगता है—खाना बीगानी  
 अजीब थी क्योंकि यही चमरे ही है जब हरे बच्चा बीगानी बात  
 और गुँघरा लेकिन उनकी जगजग खामोशी न देती । बात कुछ  
 ही गये तब भी उनकी मान मुखर न हुआ । जैसे-जैसे एक साल  
 लगाते । वस एक ही कमी थी कि वे बीगाने न थे । लोग बरस के  
 का टीका पहिन कर अपने नाम के अर्जुन विरुद्ध दमईलाल  
 हैट-गुँघरा । काबल का कबरोटा, बजरबटे का नजरौटा और गोट  
 धीरे धीरे बेटा दमईलाल ही गये डाँडे बरस के—अच्छे खासे

पर ही लालों के बारे-बारे करने लगते ।  
 ही गोती के कायल थे । गुरेन फिर और माकट से टेलीफोन  
 उठता । लेकिन रोजगार तो रोजगार है । सेठ जी बीगाने लिये  
 उन्हें देखते तो बड़ी-खाता मूल जाते । उनकी रोम-रोम खिल  
 निरले-बदले थे सेठ जी की गद्दी तक धागा बीगाने लगे । सेठ जी  
 बदले-बदले गीत यही तक पहुँची कि दीवार का सहारा लेकर  
 घुटनों के बल ही उठते सीरी दुनिया को मापने का संकल्प किया ।  
 करघटे बदलने लगे । धीरे-धीरे उनके दो दाँत फूट आये । फिर  
 समझते लगे । फिर हाथ-पूर पटकते, लकते, मुँहकराते और  
 बन्द किए पड़े रहते थे, आँख खोल कर दुनियाँ की हिस्सी-उपशफा  
 का लालन-पालन होता रहा । वह जी भीगी झुँडेर ऐसे आँखें

एक दिन शहर से गुजरते दृष्टे जब सेठानी बच्चे का बिकर कर रही थी तो मधे डूपवर से मिथी सुनीर की दिखाने की सलाह परस का हो रहा था, उनका मन काफी कड़ा हो गया था ।

जी की दुस्विस्वनाओं का अन्त नहीं था लेकिन अब जब बच्चा पंच भूत हो गई थी । बच्चे के वर्तमान और भविष्य के बारे में सेठ जी की निराशा हो गयी और सेठानी भी, जो सुदृग्म-सिन्धूर की तो राजार की बेबी-मन्दी और पड़ो-पड़ो की गढ़-दशा बताते रहते थे । का उन उपतिथियों से भी विषयस विज्ञाने लगा जो बरसों से उन्हें बरसों के प्रपत्तों के बाद भी जब बच्चा न बोला तो सेठ जी

लेकिन व्यर्थ ।

और जानदानी देकी म विष्काउलपुष्क की लाकर इलाज करीया, देवा-विदेवा के बड़े से बड़े डाक्टरों की दिखीया । राजवंश नीलकण्ठ बड़ी किया । कौड़ी, कंगाली, अघोरियों की भीजन-वसन दिव । गढ़े भी करना पड़ा । जन्म-मन्म-वन्म विसेने जो बतिया सेठ जी से के प्रति अपने सगलन माहे को न छोड़ते, लेकिन बच्चे के लिये दवा दिया था । अपने गुण-सुविधा की बात देती तो सेठ जी उसे रखा था, जीवन की साधारण से साधारण इच्छा की भी बरहेगी से था । धर्म-विश्वस लिये उन्होंने मुद्दिक सुनें का परियोग कर और सेठ जी के पास लक्ष्मीनारायण की मूर्ति से पूजे की कामी नहीं मानी मानने की सलाह देना, कौड़ी देकीम-उपपत्तों के इलाज की । का राय देना, कौड़ी मन्म-वन्म-वन्म की । कौड़ी देकी-देवाओं से सन्देशना मन्म करती । निम्नत मूँ उठती थी । कौड़ी शब्द-कौँ की देती । उठते शब्द पर उठते मन्म । सेठ-सेठानी के प्रति पर-शरित के शोभ, शोभ-लक्ष्मी, मन्म कौँ उठते मन्म से बच्चे

लाभार, शोभना मन्म मन्म ।

शोभना, कंगाली, कंगाली, मन्म मन्म—लेकिन उठाने से

पूजे का आर्द्र र दिया । पत्नी बना । सब लोग देखते रहे । खीसे  
 दंग । और वह बच्चा भी है पत्नी रहे गया । इकीम साहेब ने देखा  
 पर एक तरफ फूट दिया । खीसे बोला घबरा गया । खीसे बोले  
 खीसे बोले से पूजा लेकर इकीम साहेब ने लपकराही से सड़क

और मसाले का खाव जियाकी जवान की नर दिव्य दे रही था ।  
 की गंध विषयक दिल-दिमाग की छू रही थी । देते घनिष्ट, मित्र, नीचे,  
 सेठ-सेठानी, रवाखाने के मरुत देखते रहे और वह बच्चा भी, खीसे  
 साहेब ने खीसे बोले की खीसे । एक आने के खीसे बनवाये ।  
 बने-खीसे देखते रहे पत्नी था । बच्चे का नन्दा आते ही इकीम  
 जो बड़ी लजबहाई नजरी से सड़क किनारे बैठे, खीसे बोले की  
 बीच मिथी मुनीर ने कहे बार बच्चे पर नजर डाली थी । बच्चा,  
 में बड़े ही गये । कौड़े चीन घटे बार जवानका नन्दा आया । इस  
 देखा कि सेठ-सेठानी बच्चे की लेकर फिर पर्व्वे और कभार

की करी ।

बगीचे के घाटे में घुड़-बाइ करके उन्हीने उन्हे आले तीज आने  
 बचान-बच्चे का हेरे पूर्वा इराव था । बच्चे के जन्म, परिवार  
 मिथी मुनीर ने बच्चे की अच्छी तरह देखा । मूँह, माँल, होंठ,  
 ही घटे जवान में लगे रहने के घाटे सेठ जी का नन्दा आया ।

बच्चे की लेकर मिथी मुनीर के पास पर्व्वे ।

की बच गई । उन्हीने सेठ जी की डिवासा दिया और वे दोनों  
 लगी है तो कभीर की भयंकर ही मन कर जाती है । बात सेठानी  
 बतीर कर आया कि, विवाह में क्या नकसान है सेठ जी;  
 बड़े-बड़े हार गये बड़ी मुनीर मिथी क्या करे ? इयावर ने साहेब  
 का इलाज करवे है वे, इयावर ने कहा । सेठ जी बोले, माँहें बड़ी  
 एक आने की खीसे आँहें का खबर करती है । खीसे-गरीब सब  
 ही और बलाग कि जक हाव में जिजा है । कुछ ऐसी हुआ है कि

बकिम सेठ जी के बिल-दिगम पर लिये झटके का असर कही

जा असर था, उसे दूर करने के लिये एक झटका जल्दी था ।”

जाइये । इतिहासियों के लड़-प्यार से इस पर दिग्गामी कालिज का  
 मुनिर ने कहा, “दीन आने इस खोजे बाले की दीलिय और पर  
 एक विजवा की जान से अपनी बही आने नचाते हूँ मियाँ

उसे फँकना चाही बड़े बच्चा सीमा—“बड़े...अको दो.....”।”

से देव रही था । परा शेष में आते ही मियाँ मुनिर ने ज्योही  
 लोभकर बड़े बच्चा को रोक डाले बेधर डाले की प्रकिया की थीर  
 लव तक तीसरे पजे का आउर किया जा चुका था और दूर कोई,  
 आया कि पूछ ले कि आनिर बड़े ही क्या रही है ? बकिम  
 न था । कसों में उभरे उठती मगना । पूरे सेठ जी के मन में  
 लोभज में था—लभकर में ही मियाँ मुनिर के इन बडकों की जानते  
 दिया । शेष में लभर उठते ही भी बडक पर फँक दिया । लभ  
 बाले ने पूरी लोभवाली से उसे लभकर डलीम लोभ की तरफ बड़ा

काहे थे ।

खानदान से ही नहीं, बोलचाल में भी वे गीसे साहेबों के कान  
'साहेब' कहलगा ही उपादा पयार करे थे । रङ्गेन-सङ्गेन और  
और हलियायाँ चोरी रंगत होले हिये भी इन्जिनियर साहेब अपने को  
की जान लेने की अकूले साहेब ही क्या कम थे । भोजी शबल  
पड़े सही है कि उन्हें जो पढ़ाई चली गई थी । किन्तु मनके

हेलवा या पूर की उचाला की ?

उठा था । लेकिन पड़े गरीब बुधारे की हेरारत और लू-लपट को  
उदास रोज़ेहिरियाँ अब भीतर-बाहरे की आग में बड़े वेवसी से खलस  
बला बहारे कब आई । उसे याद है तो केवल उठ-बूझाए की वे  
हो गई । पलकड़ के बाद बसन्त भी आया पर उसे पता भी न  
विरसविष आशापु आकाशपु भी बसै होली के साथ ही स्वादी  
थरी होली आई पर वड़े भी धूँल उडाली चली गई और मजक की  
अगहन-गैस की ठंडी रात उसने बाग-बाग कर गँवार दी । रग

मिर्जापुर

इन्होंने कल्पनाओं में देवता-उत्पत्ति मानकें बड़े जी के स्वभाव की तैयारी करने लगी। एक-एक कर्म की उसने अच्छी तरह साफ

दिया देता था।

एक दिन का भी अवकाश न मिला था। महराज और बच्चों की याद, और बड़े बाप का स्नेह उसे गाँव की रहे-रहे कर याद आया। कर्मांक डेढ़ साल की नौकरी में उसे भी और देय उठा-उठा कर कितनी बार मानकें ने छुट्टी के लिये अच्छी है वह बुद्धिवा; काम-काज में देय ही बटायी। आकाश गया लय। उनके साथ ही बूढ़ी आया भी लौट आयी, कितनी बड़े सोचता था, बड़े जी आयी। पढ़ाई से उसके लिये न जाने गये और मानकें की लगी जैसे उसका सोया भाग्य भी जग उठेगा। देवता की तरह आपाठ में भइयन और शील के स्कूल खोल

का भार होने पर विवश करती।

मिला उठता; लेकिन देर विवशता उसे भूक पशु की तरह नौकरी बमबसाते घंट की टोकरें थी। मानकें के भीतर का इंसान लिल-निदरा सादेय की गली-गलीज सहेनी पड़ती और जब-तब उनके कें बेल की तरह दिन-रात जुटा रहता। निदरा घट के लिये उसे ही जाता। और बड़े या कि जमान से उक तक न करता। कौटुं जाती और फिर घर लौटते ही रोज के बच्चों का नीरस काम शुरू भर दरभर में अदानीगी और सजामियाँ अर्काल-अर्काल काम ही बहादुर के कण्डे-लता तक की देखरेख का बड़ी इन्चाज था। दिन करना होता। आइं, जमान और बरतन मजने से लेकर 'सादेव की करनी पड़ती। दिन निकलते तक उसे बाप-पानी का प्रयत्न महेकिल खत्म ही पाते। और तब कौटु की चौकीदारी भी उसी लने का अवकाश न मिला। आधा राल तक उसके सादेव की उन्हीं की सेवा-गकरी में और से सांज तक मानकें की सांस



उसके पीछे भागे है । सब तक पीछे हटते ही जाने है अब तक वह  
 समाप्त है । पत्नीगर्भ न हटते हटते जाते ही गया । बावले होकर  
 वह-हैरियां मनी उसे देखते रहे जाते है । बच्चों के लिये यही  
 अब-अब उस पर चक्कर घटते जाता है तो गीब के लीम, बड़े-बड़े,  
 साइकिल है । साइकिल क्या गिरी नमाया है । सेठ का लड़का  
 फिर सड़सा मनक की खान आया कि उसके गीब में एक ही

मनक घटते से राजा बनकर लौटा है ।

भी वृथा बन जाया । गीब के लीम और गीब-पिरेलेदार कहते,  
 विरिया लीला लीला लीम लीला । नये लूपर से उसकी सीपड़े  
 राजा बन जाया । घुट्टा और सवका पहिन कर उसकी पारी  
 होनी । नये नये कपड़े और चादों का कठोना पहिन कर एकदम  
 या हंड बरस की इकट्टी पगार देलकर उसकी महेराल किननी खी  
 ली भी काम-काज करते करते रहे भावमान हो जाते । सीपला  
 अबकाय क्या होला है इसका उसने कभी अनुभव न किया था । पर  
 गडे, मनक के मन में उठे परोहे महेन का रूप धारण करते गये ।  
 भी बड़े ली के लीने की लीरीय बैसे-बैसे निकट आते

पकादार नीकर का टिकना डेभर हो जाता है ।

खुशियार भी खुशिक-मासिकिन की नखीली से बकादार से  
 इन्ही जाने से रंग होला है । उन्ही की खीली में उसकी अपनी भी  
 बमर पीवन की लालिमा दे डाली । वह जानला था उसकी बड़े ली  
 निरडे । वेने पर मिट्टी बहाई और गमलों की गेले से रंग कर बैसे  
 की बरहे सजाया-सुवारा । दिन रात एक करके उसने ख्यातियां  
 उगे साइ-साइकी का काट-छांटी कर उसने बनीने की ऊंगल माली  
 रखाई पर के सामान की छान-कटक कर धूप लगाई । बेतरतीब  
 की लीली की बरहे बमका दिया । कर्नाकर की करीने से नगाया ।  
 किया । मकई का एक-एक जाना लीन डाला । और सारी कठी

एक एक करके कई दिन बीत गये पर मनक के विचारों का कम न टूटा। सोते-जागते उसे गाँव की याद सताती रही। वह सोचता रहा, छुट्टी के लिये क्या कहे? पगार का तकाजा सुनकर कहीं छुट्टी भी नामान्यूर न हो जाय। मानसिक दृष्टियों की दृष्टी फिसेल के बीच मनक ने गाँव जाने का निश्चय कर लिया। पसों को रट्टी सो उसने सोच लिया देया-शरम झोड़कर मँग लिया। कोई दया की भीख तो थी नहीं। हर महीने उससे निशानी लगावा कर. साहब उसे अपने पास जमा करते जाते थे। कभी देवी-देवता भी पसों का निकर छेड़ते तो बर्मा साहब से उसे डाँट देती मिली। पर वह जो तो उसे चार-छे आने दे ही देती थी। इसीलिये उसने जानबूझ कर अपने साहब से कुछ नहीं कहा और बेसली से

साक्षात् था नहीं।  
मनक के पले पड़ी थी। मेवा मिठाई की जलियाँ में तो उसका लखनऊ आ गई। "सबसे ही ठेकेदारों की यही एकमात्र याद कही, "साहब की बदली हुई तो सायकिल भी कानपुर से चलकर साहब ने कहे दिया, 'बड़ी दिक्कत रहती है।' उसने मन ही मन लगी तो पूछते लगे, 'मनक बेरे पास सायकिल नहीं है?' और ठीक, तीसरे दिन जाकर खड़ी कर दी। मिठाई लेने भेजा था। देर भर उठता। ठेकेदार भी कंसे नक है, साहब के कहने की देर न खंड न लेसन का अण्ड। और रद्द-रद्द कर मनक जवानता से उन लोगों की मोटर कार है तो मनक की सायकिल, न पूरे ल की काम खर सायकिल लोगों के आँसू है पर चढ़ता तो बही है।

मिली है।  
से कम है। इतं बरस गुन-पसीना बहिकर उसे यही तो एक चीज क हार पर सायकिल देकर लगे सोचो, मनक किस साहूकार पाठशु की पून या बड़े की आठ में आज़ब नहीं हो जाती। मनक

दस साइं-रस तक खाना खाते, मनक अपना कहें तो क्या ?  
अबकादा नहीं मिलता । एक्टर से लीटते ही बाप पीते, फिर फलव ।  
रहे थे, पर जब से मम साहिबा लीटीं तब से उन्हें रोजी भर  
साइब पहिने ही से अपने पार-दोस्ती और सैर-सपाटे में बहते आते  
एक दो दिन जीव गये पर मनक की मुनवाइ न हुई । यां यहाँ  
"अच्छा अच्छा मुन लिया ।" कहे कर देवी जी ने जान छुड़ाई ।

मनक हेल । " मनक मिडिगिया ।

"बहूजी आप कहे देई तो हम आपका बहूत गुन मानी, मरीच  
"मेरे पास कौन खजाना रखा है, उन्हीं से कहना ।"  
पगार का नाम सुनते ही बहूजी की रीतिराई चढ़ गई । बोली,  
अब बोधा हुई चारिक सनी हुआय लेव ।"

बाई । साइंकार का खयाल भर देव । पर-महंदाया खयाल लेव  
"जान गहो, बहूजी, हमनी ई कहिन कि हमार पगार ई दीन  
ने उतर दिया ।

"अच्छा भाई तो चले जाना, जान क्यां खाई है ।" बहू जी  
अधिक जोर दिया कि उसका गांव जाना बहूत खरती है ।  
उसने फिर बहो बात दोहराई । ही, इस बार उसने इस बात पर  
मनक की समझ में न आया कि इस चूपा की ही समझी या न ।  
पर ही नीकरी से अलग कर दिया था । पर बहू जी कुछ न बोली ।  
बर्षा किया । शिक्षकते हूय इसलिये कि आया की उन्हीने पहिने  
घूम रही । फिर एक दिन मनक ने शिक्षकते हूय उनसे छुट्टी का  
आखिर बहू जी लीट आई । चार-छे दिन तो बापव की सी  
मनक के जीवन की पहिली गरीब आ रही थी ।

गरीब यां भी मुश्किल से आती है, पर बहू जी के साथ ही जैसे  
मम-साइब के लीटने की प्रतीक्षा करता रहा । नीकरपदा की पहिली

मिनिमा उठी ।

“आपकी इसी हील से तो फिर चढ़ चढ़ गया है ।” वह बो

“मैं कब मना करता हूँ, ही आवे चार-छे रोज की विजायत ।”

जी ने मामुमियत से कहा ।

“काका का तो बहना है । असल में छुट्टी चाहता है ।” वह

होते । उनकी मौजूदगी ही एक बड़ा सहारा होती है ।

जान कि तयकथित गौर-समाज में चढ़े-चढ़े रूप की मखली नहीं

के बीबी-बच्चों की रुखा-सूखा मिल जाता था । यह लोग क्या

कहा लगाया । उन्हें क्या पता था उस बूढ़े के परिश्रम से मनक

“तो कौन गांव उखड़ गया ।” कह कर वही साहब ने कहे-

फट कर रोने लगा ।

“कहा बताइए... देवर... देमास काका...” और मनक फट-

“अब क्या हुआ ?”

उदर के लिये कह कर साहब की पेशी में जा खड़ा हुआ ।

सहसा अन्दर से आवाज आई और मनक पटवारी जी को वहीं

था जैसे उसे भी देवार सोंपों का बहेर चढ़ गया हो ।

को सोंप ने उस लिखा था, और मनक की मुँहा से ऐसा लग रहा

को दम से निकल गई । आँसों से आँसू बहने लगे । उसके काका

समाचार लेकर । बड़े शौच की मूर्ख का समाचार सुनते ही मनक

लगातार का कर्मान लिये देना । पर वे आये थे सचमुच ही मूर्ख का

बापों के देश में मूर्ख उसकी प्रतीक्षा कर रही हो । सोचा था

पटवारी जी रोगी गौर बनाने के थे । मनक की लगा जैसे पट-

वर्षती रही । दिन दिव लीला तो कौड़ी के फाटक पर गांव के

का पचता बड़ा ही गया । रातों पर उसके मस्तिष्क में यही पहेली

सोचा था देवार की कहे-गुन लीगा । पर उस दिन लिकनिक

है, कीमत निकलना असाध्य है, और से साक्षरों को खत-पत्रीया पढ़ाने की काम और कारवायियों का मापदण्ड नहीं है। कीमत निकलना बेवसुल निकलना नहीं है। मजदूरी

माहिरों की मासिक उमकी विक्रयता करती है।  
 कर्मियों का काम और कारवायियों का मापदण्ड नहीं है। कीमत निकलना बेवसुल निकलना नहीं है। मजदूरी  
 और वही मुजान्दगी का मासिक अक्षरों से पढ़ा  
 सकता था। बास-कफन के लिये ही नहीं, पर था परसे का।  
 मरने के अर्थों को जगह बना रहा। कुछ करने को चाहता था पर करे नहीं  
 इन्सानियत से मुजान्दगी की प्रथा को प्रथम किया। पर  
 "छात्र-छात्रों का देखा रहा है, जो बाप के लिये पत्नी रखे।"

मरने से भीगी पत्नी को उठा कर उसे स्वीकृति दे दी।

शरीर बना।

वेरी भय-साहस से बुराया है तो ही आ। मगर देख जल्दी  
 "अब से बाप से बाप ही बिना ही न जायगा। फिर भी

है कदा :

की तरह मुजान्दगी। वही कर्मियों को साहस से पढ़ाना ही चाहते  
 था। वेवसी से घरों पर दंडित मजान्दगी वह छात्रों का—प्राण  
 पण्डित की प्रथम अर्थों को उठा कर उसे कदा ही न जायगा। फिर भी  
 अर्थिक प्रथम-सर्वक विक्रयता अर्थों से उभर आये थे।  
 था। अर्थिक-मरणा कर्तों नहीं, प्रथम और मजान्दगी के अर्थों  
 पढ़ा है। मरने की रण-रण से बड़े बाप का मुजान्दगी कर्मक रहा  
 तो ही नहीं। साहस की अर्थों को अर्थों की अर्थों को अर्थों  
 अर्थिक देखा रहा। अर्थों को अर्थों को अर्थों को अर्थों  
 और मरने अर्थों की प्रथापर से कर्मियों को पढ़ा

करती कही ।

“है हम नाहि कहत सरकार । महिना का महिना दफ्तर से मिले वाला पगार आपका दिहै क चही ।” मनक ने उत्तर-

“और यह सायकिल क्या तेरा बाप खींच मरा था ?”

मनक निडरिडाया ।

“देवर...हम डंड साल से.....एककओ पैसा नाहि पाइन ।”

“पैसे ! पैसे कहां है ?” बर्मा जी ने आश्चर्य से कहा ।

काम नहीं करता । बेहद लापरवाह हो गया है ।”

बात का भूत सवार हुआ है तबसे पैसों की रट लगाये है । कुछ

बस भीतर हो भीतर कुछ कर रहे जाते हैं । जब से इसे गांव

“आप क्यों बिना बजह जी दुखा रहे है ? मैं कहेती नहीं हूँ ।

“देवर के बच्चे !”

“देवर.....”

पर तक देखा ।

“सुनता नहीं गलायक ।” कहकर बर्मा साहब ने उसे सर से

देती है । पर मनक निरवल खड़ा रहा ।

उनके दुतकारन में भी उपाया और पैसा की चरम सीमा दिखाई

पानी मनक को पालन कुत्ते से भी गया-गुबारा समझते हैं, बर्मा जी

इंसान के बच्चे में निहन्द बनें पशु हैं । दुल्हानिबर बर्मा और उनकी

बसर करते हैं और देवर ने जो सत्य समाज के नागरिक होकर भी

कफ है । एक है वे जो इंसान होकर भी देवान से बकरर खिन्दी

इंसान और देवान में नहीं अन्तर है, नोकर और मालिक का नहीं

किस तरह भोले-भोले रहे कर भ्रष्ट की प्रतीया करते हैं । आज के

से मालिक को क्या ! उसे दुखों क्या कि मुजाहिम के आश्रित

पर नहीं उसका धन है । ऐसे मुजाहिम की बीमारी और मोल

“ये मनकें फिर क्या पद पाया है ?”

तब मैं भी न देख पाया ।

भा किन्तु सोने के थाली-थाली गढ़ने और सी-सी के नोले की उभने है । ठेकेदारों के पदों से आने वाले मेव-मिठाने वहे अक्षर देखते हैं कि आशय अवश्य है कि आखिर यह सब आता कहीं से पड़े तो वह अपनी आँखों से देखता, अर्थमय करता । पर हँ, उसे धीरे-धीरे पर देखता । कौड़े और हँवा तो उसे विस्वास न होता पर सोने के दो-चार नये गढ़ने की भी वहे रहस्यमय ढंग से उनके सी-सी के नोले हरे लीसरे दिन गुँडवा मंगाली थी । हरे महीने एक में जमा करने जाता था । फिर भी न जाने कहीं से, वहाँ जो मिथ्या नही कहे सफल था । सोरी की सोरी बनवाते तो वही वहाँ साहब की आल सारार खंड थी । किन्तु मनकें उसे

देगा । उससे पहिले ही कौड़े की हँवा मिल सकती ।”

पहिली बारिष तक ठक सको तो चार-दो रुपये का इन्तेजाम करे साहब इन्जिनियर साहब से मरहम सा लगाते हूँये कहे, “मैं

तकें मित्रता ।

बनवाते उसी को दे आते हैं ? मनकें से अपना सीधा-साधा फिर उन्हें भी किसी से नौकरी मिलाने है । क्या वे अपनी पर क्या दसलिये कि गरीब की गार्डी कामाईं इजम करने रहें ? मिथ्या । वहाँ साहब ने उसे दफतर में अर्द्धली अखर कर दिया था दिन-रात खून पसीना बहाकर भी उसे तन ठकने की कपडा नही पचपन रुपये हरे महीने देखे जाता अन्धाय है । किससे कहे कि रोटी देकर जी-जीव काम सेना और ऊपर से सरकारी बनवाते के मनकें निरंतर ही गया । कैसे कहे कि दो जून खली-सूखी

कपडा बांध कर लगा होगा ? खली, कमीने कही के ।”

“और इतने दिन घर कहीं से लिगा ?” गीब से रोशन-

आगे-आगे पटवारी और पीछे-पीछे मनक । शहर की चौड़ी-चौड़ी सड़क, बिजली की बलियाँ मनक की तरह बिजबिब थीं । चमचमाती कारें, जैसे उसका उपहास करतीं, आदरी सप्तमी का दिन बजती चली जा रही थीं । दपतरी के उदास बाबू, चपरासी, लोखे वाले, कुली-कवाड़ी, स्कूली लड़के-लड़कियाँ मुरझाये से आ जा रहे थे, जैसे रिवार उनके लिये अवकाश का दिन न होकर मातम का दिन हो । जैसे उन सप्ती के घर सप्ती हो चुकी हो । और

बन गयी ।  
 चलते-चलते उदरों जलती बोटों का आदेश दिया । और मनक में छिपा सारी हृदय पिघल गया हो । जो भी हो मनक की मनक कोई छूँत का रोग हो । सामय है मम साहिबा की कठोरता पर जो न उसे अपनी तरफ आते देखे पर समेट लिये, जैसे

हृदय की भाँति ही चूर-चूर हो गई ।  
 गरम चूँदें हलक पड़ीं । चमचमाते बूँद पर गिर कर वे मनक के चर्मा साहब के पर छिँते समय उसकी आँखों से आँसु की दो गरम-गरम की भाँति ही चूर-चूर हो गई ।

"कह दो दिया । अभी किसी तरह काम चला लो । फिर पड़ती तक कुछ कर करा दोगे ।" इतनीबिपर साहब ने अपनी बात और भी स्पष्ट कर दी ।

"कह दो दिया । अभी किसी तरह काम चला लो । फिर पड़ती तक कुछ कर करा दोगे ।" इतनीबिपर साहब ने अपनी बात और भी स्पष्ट कर दी ।

"तो क्या अभी जायगा ?"

"का बस है उर । जयमन आपकी मरजी । अब सप्ती का भयाना है ।"



अभाव और निराशा के यही पण्डे सहेले-सहेले मरुप्य उन्हें  
क्षाने का आदी ही जाता है । वर्तमान से बड़े बर्तमान है केवल  
मरुप्य की आशा लेकर । उसी के लिये बड़े गौठ की अन्तिम पाई  
बढ़ कर खाली है । विरथास और आशा के यही लाने उसकी

पण पर आ अर्द्धने वाले अभाव ही मनक की विरासत में मिले ।  
तो उसका बाप ही बटाई पर धरती क्यों उठाता ? जीवन में पण-  
उसके पास क्या धरा था । अपने निज के बल भी न थे । हीने  
लिये बड़े बड़े वरस की कठिन तपस्या थी । भीज देने के लिये  
ही धरती की सायकिल धी बड़ी चीज गहो है किन्तु मनक के

प्रम, गति-विरादर और वासनी का दल ।  
सामुख पहिली गरीब की मरुप्यणा न थी, था तो बेहदवी का  
पा—एकदम असहाय । रीते-धाने से ही दिन बीत रहे थे । उसके  
बड़े कागज की गाव से भी अस्तिपर सिद्ध हुई । बड़े अब अकला  
के चन्द टुकड़ों के बलवैले उसने निज महल की योजना बनाई थी  
विरसिचित स्वप्न और अभिलाषायें भी उससे बिदा ले गई । कागज  
गांव पहुँचते पहुँचते शहर की बकाचीब की तरहे मनक के

सबल आंखों में उसके जीवन का अभिप्राय ।  
के पानी में उदास शर्मिष्ठी का साया झांक रहा था और मनक की  
हूँये खेत सही भीन थे । सन्ध्या भी उदास थी । निर्जीव बनेंया  
से पीठिल बनता रहा । दोनों चप थे । हवा, धूल, रास्ते, जूते  
के बाद एक आते गये और मनक पटवारी जी की लिये भरपूर शक्ति  
जाने पहिचाने रास्ते, सुपरिविचल से मोड़, पाण्डित्यां सही एक

धीट रहे ही । शहर पार करते करते संधि हो चली ।  
थे भी किसी खेती पूजे से मुक्त होकर अपने अपने नीचे-कोटों में

विद्युत् शक्ति का परस्परगत दाशानिक-सिद्धांत मन का मन से शहर की भयंकरता दूर न कर सके और वह गांव में ही टिकने के निश्चय पर उदा रहा । परन्तु का आग्रह उसने मान लिया और वृद्ध वृद्ध ने जिस धरती को जीत कर देयार किया था उसी में जीव बो दिया । किसान की बलवती आशा लेकर वह रात-दिन 'बिरी-बागुली' के विनाश से डरी की रक्षा करता रहा । मही से फलने

विधान है मन का ।  
 सबकी अपन-अपने भाग का फल मिलेगा । यही विधि का रहे कर अपने संचित कर्मों का फल योगी । सभी अकेले आय है ।  
 विना-विना कर बिना भी रहेगा । जाओ तुम भी शहर में कि तुम ही हो नहीं । जिस परमेश्वर ने इन्हें बनाया है वही न देगा । इनकी विनाश क्यों करते हो ? समझ क्यों नहीं लेते आँखों के सामने न देगा । दिन-रात रोते रहने वाली महेराज भी ती रो-रोख की दृग्-दृग् से ही बच जाओगे । जैसे बचने तो शायद पहिली गरीब की कुछ मिल जाय । कुछ न भी मिलेगा आर्थिक संवर्धन से उससे बार-बार कहो, "मन का शहर बौट जाओ । तेरहों के बाद भी वह शहर न जा सका । उसकी बेवसी और

संस्कार की निम्नता ।  
 कर्मों का बाधना करके उसने हिन्दू समाज के एक सङ्ग-माले अपाएव मन का न काँ ही ले लिया । फल पर मूल और मूल दोनों और जड़ पदार्थों में मोह का कारण देगरी भावना ही ती है ।  
 समाजिक के एक-एक पुरुष में उसकी भावना बंधी थी । निर्बाध होना था क्योंकि

समाजिक संघर्ष ही मन का दुःख होता था क्योंकि है शक्ति का और उसके जीवन-संघर्षों का रक्षक ।  
 आकाश के यह नयन भंग रहते हैं मनुष्य मनुष्य से उतरा है । यही आभा का शरीर की उठती से बांध रहते हैं । जब तक रंते और



हे जिसे आपका नौकर ने मारा था ?”

बड़े एक दिन ने श्रीमती वर्मा से प्रश्न किया, “उसी सापेक्षिक की इन्जिनियर साहेब की बात पूरी थी न हो पाई थी कि निकट

“जी हाँ.....।”

पुलिस अधिकाारी ने पूछा,

“यह लिखावट और दस्तखत आपके हैं ?” रजिस्टर बंद हो चुके

“जी हाँ।”

आपने इसनामज्ज वाले में कोई रिपोर्ट दर्ज कराई थी ?”

शुद्ध आपसे यह मार्जम करना है कि पिछली बहस वारीज की “अली बकलीक केशी। आय हैव कम आन ड्यूटी। वो धर।

“सो एम आय। कसिये केश बकलीक की।”

“रुईड टै सी यू।”

कहा, “शुद्ध वर्मा करते हैं।”

“व्यक्तिगत लक्ष्य।” कर्मी लिखकाले है इन्जिनियर साहेब ने

बादला है।”

कासले में कहा, “माफ कीजिये। मैं रिस्टर वर्मा से मिलना शप कर रहे थे। तथा एक पुलिस अफसर ने कोई दस ऊपर के निकट था। संपत्तिक वर्मा जी कोठी के लान में बड़े मिर्चों से गप-रफ्त दर्ज कराय थी एक सप्ताह से ऊपर हो चुका था। सुपान्त

धन का बकाया किया और न कर्म पर ही रजामान हुआ।

साहब के भीतर ही बड़े एक दिन सापेक्षिक से गया, लेकिन न उसने मर्क उतके सम्पुत्र अग्रवाणी की गति आय। फिर गोटिस की एक दिन शीत रजा था और वर्मा अल्पि इसी प्रतीका में थे कव कार्गुवादी बलदे हो भरे थी कर्म कर कर्मा हो गई। एक के बाद से ही रहे बरका।” इन्होंने विचार लगाया। श्रीमती जी की “श्री सुनी रोटी पर आराम करते, अच्छा कर्मा भी मुश्किल



सुन रहे थे ।

और वरावर बड़े सिटी मजिस्ट्रेट काखिमी साहेब बड़े ध्यान से मगर बड़े ली साहूर का सीनिपर धानेदार था, खिफिया का इन्चार्ज । लेला-वेला है । छोटो-मोटो सब-इन्सपेक्टर होला ली बात इंसरी थी । चीखे इंसारे अकसरी के यहाँ आती-जाती है । कौन उनका हिंसाव था । लेकिन यह भी कोई कहने की बात थी । ऐसी न जाने कितनी खरीदी होती ली बताते । उनके कहने पर एक ठोकेदार ने शूट दी इन्जीनिपर वर्मा की बचान की लखा सा लग गया था ।

कोई स्वप्न देख रहे हों ।

और निकट बड़े मित्रगण देववृद्धि से सब कुछ देख सुन रहे थे, जैसे उठा । थी और श्रीमती वर्मा का चेहरा एक होला जा रहा था । और कहाँ से खरीदी थी ? " यानेदार का स्वर उत्तेजनापूर्ण हो आगे कहाँ होगा ? मैं जानना चाहता हूँ आपने यह सापक्षिक कब "यह मैं नहीं पूछता कि आप पहिले कहाँ थे, अब कहाँ है और "यहाँ आने से पहिले मैं कानपुर थी. डबल. डी. में था ।"

"मैं पूछता हूँ आपने कब खरीदी थी ?"

जैसे सुन गया ।

"जी भरे पाव करीब साल भर से है ।" वर्मा जी का गला धवा सकता है यह सापक्षिक आपने कब खरीदी थी ?"

"नरर ली आपने ठीक ही दर्ज किया होगा । लेकिन क्या आप "ठीक है ।" सापक्षिक का हेण्डल बामने जैसे यानेदार बोला, कानिस्ट्रिबल के लोथ में देयकडं लखंडा उठी ।

इन्जीनिपर वर्मा जैसे चटखते जैसे साहूर आये और डेड-रेम लीग खला हुआ है ।"

उलते जैसे उसने कहा, "मुजिस्म की गिरफ्तार करने के लिये ही



कानिस्ट्रिबल के दोष में देखकरिष्मि खानक उठी ।  
 "जानव यह सपकिल ती आपकी रागसे रागसे से भी यथात  
 महीगी एवं गढ़े ।" काजमी सहित ने धीरे से कहा और है-ड-

यानदार मुक्कराया ।

साहब के दस्तखत और मोहर से जारी हुआ वारंट प्रमाते है  
 "अर इस परवान पर भी निगाह डाल लीजिये ।" काजमी  
 बक मिल लीजिये ।"

है इन्जिनियर वर्मा ने कहा, "आप मुझसे इस बारे में कल किसी  
 "माफ कीजिये मेरी सविधत ठीक नहीं है ।" पसीना पोखते

पर पसीना झलक उठा था ।

काजमी सहित अब भी खामोश थे । और वर्मा जी के माथे

दर्पित शनी ।

कीजिये....." कहे कर यानदार ने श्रीमती वर्मा पर अधूर्ण  
 किया है उनसे साफ जाहिर है कि जहो की है । वर्माके आप समक्ष  
 की रसोह, वर्मा की रजिस्ट्री और जो दूसरे जहोसे मुहल दाखिल  
 पिछले साल इलाहाबाद से बोरी गई थी । उन सहित से कम्पनी  
 "वर्मा सहित यह सपकिल जिसे आपने अपना कर्षण किया है,

तो बड़े मुर्मा गई ।

"जो रसोह ?" वर्मा जी इतना ही कहे सेक और मिसेव वर्मा

रसोह-वसोह है ?"

रहे थे । वर्मा यानदार ने दूसरा प्रश्न किया, "साइब कोड़े  
 वर्मा जी बड़े-बड़े गणित का कोड़े जटिल प्रश्न सा हल कर

"संकेतों हैं लड़का होगा," नरु ने करतल समेटते हुए कहा।  
 "लड़का होगा तेरे कहने से," अर्मा बोली, "सब लखन  
 लड़की के हैं। चंदरे पर चमक है। पंडू पर खड़ी लकीर नहीं है।  
 लड़के की भला कही बलनी पीरे होती है।"  
 "पहिला बच्चा है। दई तो होगा ही।" शिवदा ने शान्त  
 भाव से कहा और दीदी की जेसे आह मिला गई।  
 "सपने में अउआ भर आम और चौमुखिया दिया देखा है मैंने।  
 लड़का होगा। मेरा मन कहता है।" वह बोली।  
 "मनचीता हो जाय बेटी, तो किसी के घर बिरिया न आयें।"  
 अर्मा ने तर्क उठाया।  
 "अच्छा भर पेठ खीर की रही। लड़का हो तो अर्मा की  
 तरफ से। लड़की हो तो दीदी की तरफ से।" बजाहर भाई ने  
 हँसते पर बोली फटी।

नई विन्दागी



जवाहर भाई ने कुछ ऐसा मुँह बनाया जैसे कन्यादान कर रहे हों।  
 आज-कल। हम के सम्बन्धन की इस दुबारा और मोटर चालिये।"  
 "सिफिन सीता के सिधु राम बड़ी मुश्किल से मिलता है  
 "अरे हाँ, यह तो मैं भूल ही गई। यह सीता-सावित्री बनगी।"  
 "पर आप तो कहती हैं लड़की होगी।" सीता बोली।

कमलानी गुनगुनी।  
 तब रहेगा। हम तो उसे दीवान-दारोगा बनायेंगे।" अम्मा ने  
 "तब क्या। तब तो अपने बाप की तरह यह भी पैसे-पैसे से  
 भाई ने अभिमान से फिर उठाय।  
 "तो फिर यह गुट्टिकन क्या महीन लोखक बनेगा।" ललित  
 काम जैसे सीता के नही है।"

"गढ़वा नचवा न बनायेंगे उसे," अम्मा ने मुँह बनाया, "यह  
 है, सिफिन होगी पुत्रन।"  
 "यह कलकार बनेगा—नरक या सीतावन। पिठेरा भी हो सकता  
 "कूट-कूट छिटिये।" नन्दू ने बोष में ही टोकते हुए कहा,  
 बनेगी। और कूट जाइन... ..।"

बोले, "गजउठ आँफ बर्ना देखना इसका। मन्सु रेखा देखते ही  
 "इस बच्चे का बहुरूपित बड़ा प्रोनाउसोड होगा।" सिद्धू भाई  
 कर हँस पड़े।

दयाला समाई है—धीरे सागर में।" और सब लोग ठहरेका मार  
 "धीरे बोल ही ऐसी है। देखिये न भगवान विष्णु ने भी कहा  
 की तरहे जानी कैसे होगा?" जवाहर भाई आँखें नचाते हुए बोले,  
 "धीरे ही बच्चे की भी खिलानी चाहिये था।। दरना भीम  
 शिवाजी ने बूटकी थी, "जैसे दोनों तरफ से धीरे का प्रत्य कर लिया।"  
 "हाँ हाँ, सिधु भी तेरी पर्य भी तेरी, उठेगा तेरे बाप का।"

मुलगाओं जैसी दाढ़ियाँ या सरदारों जैसे जूँड़े भी नहीं होते । एक से होते हैं । उनके माथों पर न त्रिपुंड्र होते हैं न चोटियाँ । कोई तमोज नहीं की जा सकती । देखने में वे सब करीब-करीब बरतार हैं । सब बच्चे एक ही तरह होते हैं । उनकी आवाज से रोते तो उन्हें मार-मार कर खलाया जाता है—दुनियाँ का यही देखकर रोते हैं । या शायद घट की कूद याद करके रोते हों । नहीं पर भी रोते हैं । वे सब जागते रोते हैं । शायद दुनियाँ का दुःख कटन है । अस्पताल की दुर्दशा देखकर रो रहे हैं । बच्चे तो घर लगता है बच्चा ही गया है । यह शायद उसी का पहिला

से तो यह लाख दर्जा अच्छा है ।

तो यहाँ आ ही गये हैं । घर पर नोडन-मंगिन से बच्चा जनवाने कोई पानी-प्याज की भी खबर लेने वाला नहीं है । लेकिन अब नहीं है । चार-रफा कहे, दस बार मिठते-चरीरियाँ करो, यहाँ जाते हैं । और यह जनरल बाड़े है । यहाँ कोई किसी का पुरसा-हेल लिख तो यह रोजमर्रा का काम है । दंड देखते-देखते यह बंद हो मौजूदगी मात्र से बड़ा बल मिलता है । नहीं और डाक्टरों के ही होती । हममें से कोई तो रहता उसके पास । अपनी की कोई भी तो नहीं है उसके पास । अच्छा होता डिवायरी घर पर पला यही हो । अचारी खटपटा रही होगी खबर हम में । घर का सफाई । यह खत खोर से चीज कहीं सफाई है ? लेकिन क्या और से सफाई लग । यह-गिला तो नहीं है । गीला नहीं हो

रूप ही रहे ।

बाहिले थ, लेकिन किसी प्रशिक्षण मात्रा के बालकार की मुकदर सब बोल । अपनी, राम के समान में वे शायद और भी कुछ कहना डाक्टर कहते तो बरहे सब के काम तो अध्याय । " बलिब भाई "बाहे बड़का ही बाहे बड़की, उसे डाक्टर बगाना बाहिले ।

“अभी की खिणी का ठिकाना न रहेगा। वह उन्हें बग भी करेगा तो भी वह खिना होगा। गीता अब कभी परती ही न रहेगी। वह भी बनेगी—गीतराजिनी भी। मैं का दर्ता बहूत बड़ा होता है। वह अपने एक एक बंदे से बंदे की समझ बना देती है। यशव

तो हम धन ही जाय।

जाय। दुनिया में उसका आना साधक ही। वह महेन्द्रपुत्र बने वह यशस्वी ही, विरजोवी ही। सब का प्यार ही, सब के काम हम सब की अर्था का पात्र ही और यशपाल की तरह प्रतिभावाली। बड़ा आदर्शो बने—माधव वंशा मनीषी बने। विदवा की तरह प्रमत्त बने। जैन और जिकन बने। मैं चाहता हूँ, वह बहूत खरप ही। मुझे ही। गीतम और गीती बने। युष्कन और वेदा। मेरा जाल। मैं चाहता हूँ वह मेरे के कर्तव्य वंशा ही। नाक-नकशा, सीख और सूरत—देर-नबर से दुखित होगा, मेरा की तरह साफ है। गीता वंशी बड़ी अखि होगी उसकी— बच्चे का रंग—गीता-विष्ट होगी। उसकी भी भी तो कुन्दन समझदार है। वह ऐसा ही नही होगा।

ही सकता। ही जाय तो हम कुछ कर भी नही सकते। गीता के बदले कहीं कोई लड़की न मरू दे हमारे मरने। लेकिन यह नही और ऐतिहास होता है। मेरा बच्चा कहीं बदल न जाय। लड़के जाता है। फिर उसके शेष पर एक पर्वा बांध दिया जाता है। कोई न बदलता होगा। अमल ही बच्चा उसकी भी की दिखाना भी-बाप की। ऐसे ही बच्चे बदल जाते हैं। जान-बूझ कर तो सकते हैं न कुछ सोच सकते हैं। न खूब की जाते हैं न अपने बेचारे एकदम भले और गोसमझ होते हैं। न कुछ कहें पर्य नही होते हैं।

प्राणिक से किसी की जिज्ञासा नही हो सकती। सब के सब निरा-

हो चुका था। मलबे का एक ढेर था। मैं सब रूहे गया। मैंने

“मैं घर की तरफ लौटती लड़खड़ा कर फिर पड़ा। वहाँ खरब  
 वहाँ पड़ोस के एक बच्चे का खिलौना था।  
 तरफ था। मैंने तो पूरे से कोई चीज टकराई। मैंने उसे उठाया।  
 भी धुँये में खो गया था। मेरी दम घुँटा जा रही थी। सड़क की  
 था। मेरे लगाये गुलाब और बेले कुछ भी नहीं दिखाई दिये। घर  
 पड़ा। बगीचे में धुँये के अलावा और कुछ भी दिखाई न दे रहा  
 पड़ा उरुई। मैं कमरे से बाहर आया तो वहाँ जोर का धमाका सुनाई  
 लेकिन किसी ने जवाब नहीं दिया। मेरी आवाज शायद सुनाई नहीं  
 गीता बच्चे के दरवाने विनये में मध्याह्न थी। मैं दो बार चीखा  
 दी। लेकिन वे अपने काम में लगी थीं। मैं पूजा कर रही थीं।  
 पड़ोस। धरती कर मैंने मैं की आवाज दी। गीता की आवाज  
 आवाज तेज होती गई। लगा जैसे वहाँ सब घर की छत पर फिर  
 साथ वहाँ से देखाई जाइयाँ की धरपरटाहट सुनाई पड़ी। वहाँ  
 “मैंने एक बहुत बुरा सपना देखा है, मैंने कहा, “मुझे एक  
 मेरी मुँह धूर रहे थे।

पत्थर-पत्थर, जो नई जिन्दगी के बारे में बातचीत कर रहे थे,  
 ताल से लग गई थी। मेरी देह बुरी तरह काँप रही थी और  
 आँसू बूँदी तो मेरी दिव्य बुरी तरह घुँक रही थी। ब्रह्मान सूँबकर  
 लेकिन और की पहिली फिरन के साथ, एक चीज के साथ जब मेरी  
 रहा, उस समय तक जब तक कि मेरी नींद ऊँच में नहीं बदल गई।  
 मेरे विचारों का यह कम अर्थियति से चलता रहा। चलता  
 फर से इंसान बनते थे।”

नाजक होते थे। देवताओं के प्रवाद से सीप या कण्डल में  
 रूप नहीं देखा या शायद। गरीब का यह रूप न देवते वाले श्लि  
 की पार्श्व। आँक। पृथक उसे क्या जाने। मरु ने गरीब का मैं



इसके बाद जो भी, विलम्ब में लिखता है कि वह भव-विवर्तना की बात कर रहा है। कल-कलानी की मिठी में लिखा था है। वही घर में भिन्न-भगिण, भगवत और स्वयं, भगवत और कल-कलानी भी गुरु है। और यह, भगवत का भाव है स्वभाव। सुनिधि में स्वभाव और स्वभाव का भाव।

"फिर वह वंद्य है कि राजा वह पालन वही करते है ? राजा राज करता है, यही में विचित्रता बने हुए पृथ, "परमा का नाम करने राज किम पर करे, स्वयं ?"

"यथा ऐसा नहीं हो सकता कि बंधु न हो ? गीता-बारी न हो ? वम हो न वम ?" नरक ने प्रश्न किया।

"हो यथा नहीं सकता। लिखें विद्वानों से प्यार है अगर वे चाहें तो बंधु बंधु दरिद्र न होगे....." शिष्या बोले।

उनकी बात पूरी होने से पहिले ही मां कहने लगी, "हैं ही मुझे विद्वानों प्यारी है, नई विद्वानों भी। दादा भूल से प्यारी ब्याज देती है।"

"विद्वानों से हमें भी प्यार है," बलिब भाई ने कहा, "उसके लिये हम सब कुछ करने की तैयार हैं।"

"तो फिर मिठई भंगाइये," नरक ने मुस्कुराते हुये कहा, "बंडका हुआ है।"

"कलकार !" नरक ने मधुरता से कहा, "तब तो खीर बनेगी।"

1. Եւ ինչ ճշտե՛լք Եւ յարձնեալ  
 իմանա՛լ զ՝ արեւելի լի շահե՛ր զԵւ զ՝ արեւմտեալ լի շահե՛ր  
 զ՝ արեւելի լի շահե՛ր զԵւ զ՝ արեւմտեալ լի շահե՛ր  
 զ՝ արեւելի լի շահե՛ր զԵւ զ՝ արեւմտեալ լի շահե՛ր  
 զ՝ արեւելի լի շահե՛ր զԵւ զ՝ արեւմտեալ լի շահե՛ր  
 զ՝ արեւելի լի շահե՛ր զԵւ զ՝ արեւմտեալ լի շահե՛ր

1. Եւ լիք ինչ ինչ  
 ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ  
 ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ  
 ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ  
 ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ  
 ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ  
 ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ ինչ

Եւ ինչ ինչ ինչ ինչ

में दबी रही ।

और निर्भीक खड़ा था, गौरीक यह खड़ी खिटाव की रही।  
समाजो ख्याल के लोग थे—उसे स्वीकृति मिल ही चुकी थी।  
तोरीख ही तप देना चाकी था। मां-बाप की तरफ से—जी आर्ष-  
साथ एक निरवय और एक खड़ी लेकर गई। शोदी की सिर्फ  
इतिहास के बाद जब वह घर जाने लगी तब भी वह अपने

सम्पन्न, प्रति बनकर भी उसे न दे पाय ।

वह खड़ा रह सकेगी, उससे कुछ पर सकेगी—ऐसी जी शायद कोई  
भावी प्रति देखती तो इसलिये कि उसे निरवास था कि उसके साथ  
थ्या उसकी खिन्माविया है। मापर फिर भी वह निर्भीक में अपना  
कि निर्भीक थ्या है, कंधा है, थ्या उसकी आर्थिक स्थिति है और  
मावर्कता में वह गई ही—ऐसी बात न थी। वह जानती थी  
स्वयं भुजाला किधी भुजालों में रही ही, भीवन के उन्माद था

निबर उठगा इसमें किसी की सन्देह न था ।

सकी। परती के रूप में उसे पाकर निर्भीक का व्यक्तित्व और भी  
शायद थड़ी वह शालिनी थी जो उसे निर्भीक के इतना करीब ला  
कोई भी लड़की एक संभव्यता के दिन में जाहूँ बना सकती है।  
मापर ही, उसके तीर बरीती की दूर बनकर देगी पड़नी पाकर  
इतने में भुजाला कोई परोवार रही ही, ऐसी बात न थी।

की थी ।

थी वय-सन्धि की यह गार्जुत उस लिखती देखती उद्वेग पर  
की घुंक्तों जब प्रतिबल शब्द के भीत भाषा करता है। थड़ी  
की वृत्तिका इतन और धार के रूप धरती लगती है। इतन  
आली से आलित ही जाती है। अन्त में कथम पर जब कलमा  
जा सपनी की सपनी भाषा में लिखनी ही सपनी ही सपनी  
दोती लिखनी के एक ही है मय में गौर रही थे—उस युग से



और उस दिन जब सुजाता दुहने के बरतों में सिमटी थी, सर्कबाई भी बड़ी बारबार अगुठे से अमान करते-ले लगती थी तो साथ की लड़कियाँ उसे खूब छिजाती। और जब धीमे धीमे पलकें उठाकर वह पंखाल में अमा हुए लोगों पर उड़ती उड़ती लगाई जाती, तो वे भी सहैलिया से छुप न पाती। "हेय रे ! ऐसा भी क्या लगाई ! देख केना ! खूब देखना ! अब कहो भाग पाई हो जायगे ।"

सुजाता के चेहरे पर एक फीकी सी मुस्कराहट खेल जाती और फिर उसकी जनीही आँखें झप जाती। "गोरी हमसे....."

एक कहेकहे गुँज आता ।

वह झँझला कर ह्रास झटकती तो दुसरी कहती। "करने-करती लिखल । यह सब करना पड़ेगा ।" सुजाता के गालों पर हलकी सी सानिमा दौड़ जाती और वह बूँद का झर दालों में दबा लेती। लगता जैसे किन्हीं विचाराँ की धार को बाँध देना चाहती है ।

वह दरअसल बाहर जमा हुए लोगों में नतीन को देखना चाहती थी और बायद उसी के बारे में सोच रही थी । फिर जब बिदाई के मोज में सुजाता ने नतीन को देखा तो वह बड़े अर्थपूर्ण ढंग से मुस्कराई । बोली—

"यूँक है तेहूँ मेरा पब मिल गया ।"

"पब भी और बड़े छपा हुआ निमन्त्रण भी, जिसमें मेरी उपस्थिति सपरिवार प्राधान्य थी ।" कहे कर नतीन मुस्कराया ।

„I ԵՒ ԵՔ ԵՒ

ՉԷ ԵՒԵ ԵՒԵՆԷ Լ Ե ԵՒ ԵՒԵԿԵ ՏԻԵՂԻԵ ԵՒԵՂԵ ԼՅԵ՛,  
'ԵՒ ԵՔԵ ԵՒԵՂ ԽՆԻԿԵ ԵՒԷ ԳՆԻԿ Զ ԶԻ ՆԻԵ  
Զ ԻՐԵՅ ԵՒԵԻ ԼՅԻ Զ ԵԻԿ..... Լ Զ ԵՒԵՂ ԵՒ ԵՒԷ ԵՒԷ  
ԵՒ ԵՒԵ՛, 'ԵՒ ԵՒԷ ԵՒ Ե ԵՒԷ 'ԵՒԷ ԵՒ ԵՒԵԵ ԵՒԵ  
Ե ԵՒԵՂ ԽՆԻԿԵ ԶԷ ԶԷ ԵՒԷ ԵՒԵ ԵՒԵ՛,

„Լ ԵՒԵ ԵՒԵՂԵ ԵՒԵ ՆԻ Զ ՆԻ՛, 'ԵՒԵ Ե ԵՒԵ  
ԵՒԵ ԵՒԵԵ Ե ԵՒԵԷ՛ ԽՆԻԿԵ ԵՒԵՂ ԵՒԵ ԵՒԵ՛,

ԵՒԵԿԵ ՏԻԵՂԻԵ

। ਤੇਕ ਹੁੰਦੇ ਆਉਣ ਦੇ ਚਾਹੇ „। ਤੇ ਆਉਣ ਦੇ ਚਾਹੇ  
 ਆਉਣ ਦੇ ਚਾਹੇ ਤੇ ਆਉਣ ਦੇ ਚਾਹੇ । ਤੇ ਆਉਣ ਦੇ ਚਾਹੇ

„। ਤੇ ਆਉਣ ਦੇ ਚਾਹੇ । ਤੇ ਆਉਣ ਦੇ ਚਾਹੇ  
 ਆਉਣ ਦੇ ਚਾਹੇ, 'ਮਨੁੱਖੀ ਮਨੁੱਖੀ ਦੇ ਆਉਣ '। ਆਉਣ ਦੇ ਚਾਹੇ,

„। ਆਉਣ ਦੇ ਚਾਹੇ ਆਉਣ ਦੇ ਚਾਹੇ ਆਉਣ ਦੇ ਚਾਹੇ  
 ਆਉਣ । ਆਉਣ ਦੇ ਚਾਹੇ ਆਉਣ ਦੇ ਚਾਹੇ ਆਉਣ ਦੇ ਚਾਹੇ

„। ਆਉਣ ਦੇ ਚਾਹੇ

„। ਆਉਣ ਦੇ ਚਾਹੇ

ਆਉਣ ਦੇ ਚਾਹੇ ਆਉਣ ਦੇ ਚਾਹੇ ਆਉਣ ਦੇ ਚਾਹੇ ਆਉਣ ਦੇ ਚਾਹੇ । ਆਉਣ ਦੇ ਚਾਹੇ  
 ਆਉਣ ਦੇ ਚਾਹੇ ਆਉਣ ਦੇ ਚਾਹੇ ਆਉਣ ਦੇ ਚਾਹੇ । ਆਉਣ ਦੇ ਚਾਹੇ  
 ਆਉਣ ਦੇ ਚਾਹੇ ਆਉਣ ਦੇ ਚਾਹੇ ਆਉਣ ਦੇ ਚਾਹੇ । ਆਉਣ ਦੇ ਚਾਹੇ

। ਆਉਣ ਦੇ ਚਾਹੇ ਆਉਣ ਦੇ ਚਾਹੇ „। ਆਉਣ ਦੇ ਚਾਹੇ

„। ਆਉਣ ਦੇ ਚਾਹੇ

ਆਉਣ ਦੇ ਚਾਹੇ ਆਉਣ ਦੇ ਚਾਹੇ ਆਉਣ ਦੇ ਚਾਹੇ ਆਉਣ ਦੇ ਚਾਹੇ

ਆਉਣ ਦੇ ਚਾਹੇ

उसकी देखभाल के लिये तो ऐसा बुरा बुरा... " "हाँ, जीरा । कलाकार तो बच्चों की तरह मासूम होता है ।

उसकी बुराबुरी लगाती होगी । "

"यह सब लेखक आप जैसे ही होते हैं ? बुरी में बुरी भी

ही गयी । "

"देख लो । जब मैं पढ़ती हूँगी । बुरी लगाता तो आज मैं

"पढ़ा रहे हूँगी । पढ़ती क्या पढ़ें ? "

"क्यों क्या बुरा है ? "

। पण की ।

"आप तो वे आइं । बुरा जल्दी पुरा । " नीरा ने सामने

कल्पनायें रोपना शुरू कीं और-तिरछी रेखाओं में व्यक्त हो उठीं ।

रही अर्थात्तया, अगले से वे लिख आकाशवाणी और स्वरिनल से

लेखनी पत्रिका ही खोजें गये गी । हँस के लिखी काले में

रानी ने कपरे के काले रंग के काले रंग और जब उसकी

"बदल गये, अणकी हँस... और... अणकी हँस... " है ।

। नीरा ने कल्पना गायत्री बलिष्ठ की ।

"आप तो मैं ने अभी ही मर रहे हैं आज क्या बुरा है

। उरु हँस रहे ।

ही रानी ने आँसू... " रानी ने आँसू

"पढ़ें आँसू पढ़ें पढ़ें । पढ़ें पढ़ें पढ़ें पढ़ें पढ़ें पढ़ें

आप पढ़ें पढ़ें पढ़ें पढ़ें पढ़ें पढ़ें पढ़ें पढ़ें । "

"पढ़ें पढ़ें पढ़ें पढ़ें पढ़ें पढ़ें पढ़ें पढ़ें पढ़ें पढ़ें

। पढ़ें पढ़ें ।

पढ़ें पढ़ें पढ़ें पढ़ें पढ़ें पढ़ें पढ़ें पढ़ें पढ़ें पढ़ें ।

"पढ़ें पढ़ें पढ़ें पढ़ें पढ़ें पढ़ें पढ़ें पढ़ें पढ़ें पढ़ें

पढ़ें पढ़ें पढ़ें पढ़ें पढ़ें पढ़ें पढ़ें पढ़ें पढ़ें पढ़ें ।



जायगी।" रानी मन ही मन तर्क विवर्क करती रहती।  
 को अथाप्युक्त कीमत ? तब कहीं अप्तपत्तल में उसकी बात पृथ्वी  
 'मगर जाऊँ कहीं ? वस्त्र को दवा चाहिये और दवा फरसो

पहिले ही रानी तलाशने वाले मजदूर चल पड़ते हैं।  
 घर से बाहर ही गया, जैसे कड़का की धरती में सुरज निकलने से  
 समझ में नहीं आता नील।" रानी ने एक ठंडी सांस ली और  
 उजले हैं मगर घट खाली है। किसके आगे हेष फलक। कुछ  
 का चूँक है। न जाने कौन कैसे दावे दाँके बैठे हैं। कपड़े खर  
 "उन बेचारी की अपनी उलझने क्या कम है। घर पर मिट्टी  
 आधिर फिर कब काम आयेगा ?"

"इतने सारे दरत हैं। किसी से माँग क्या नहीं लेते ?  
 "क्या बताने नील ! दवा के लिये पैसे भी तो चाहिये।"

यमा दिया।  
 दवा का पर्चा।" और उसने रानी के हेष में दवा का प्रतिकल्पन  
 "सोच क्या रहे हो ?" नील ने टोकाते हेष कहा, "पढ़ रहा  
 धुँधले में अपने निनर्त्तन दिन पूरे करता है।"

और उसने भी कठिन मील, और इत्सान चित्तगी और मील की  
 जाती है। किन्तु बीजमयान ? किन्तु गठिल मयन है। जाना ?  
 सहे कर भी विवर्तित नहीं होता तब उसकी मजिल आसान हो  
 से जानों की बाधारे। तब कहते हैं जब साहित्य-बीबी इन्हें  
 जीवन। पण पण पर अणुष की ठोकरें। उठते बैठते, घर बाहर  
 और रानी देवद्विज सा बानस रहती, "किसा है यह साहित्यिक

रामेश्वर उभर आये और यह उदास देवद्विज कपड़े से बाहर हो गई।  
 देवद्विज ही क्षण उभरते माध पर किन्तु और संरक्षण की निर्वर्तनी  
 "जाना ?" नील की आँत क्षण भर की समक उठी और

‘आपका ... भा ... रानी जी है । आदेश आदेश । कसिये

। फकी

परन लिये रानी ने कल्पना प्रकाशन की मध्य प्रसारण में प्रवेश  
मान की अथा मान में लिये । मस्तिष्क में कुछ ऐसे ही उलझे हैं  
न फकी का अन्त । लोग एक दूसरे से मिलते हैं, अलग होते हैं  
से टकराती थीर टूटती रहती है । न फकी का उदगम निश्चय है  
कधी अनेक लहरें न जान फिसकी टोह में भटकती है । एक दूसरे  
के आकर्षण होते हैं । आगे पीछे साथ साथ चलते होते हैं । मानव  
ही एक बहल पक्ष से भरी सड़क की भाँति है जहाँ भाँति-भाँति  
सी बुझाते जाते टोह पर आ जा रहे थे । मानव जीवन सचमुच  
रानी की तरह थीर भी फिसने लगे अपनी अपनी पहलियाँ

में मूर्च्छना भरते हैं य कहते और रानी ने लम्बे लम्बे डग घाँसे ।

“कौन वार नहीं वार । आ जायों ।” वनिये ने अपने कर्ण स्वर

मिल जलिये । इस वार कौन जगाए दे रहे गड़े हैं ।”

“हो, वनिये वर कुछ ... और भाई बड़े बुझारे धँसे जल्ये

वादे मधु से क्या ?”

“कौन नहीं । वार जी ... आज कल दिवाड़े नहीं देते ... कही

“कही भाई सेठ ?” रानी ने लिठकते हैं य कहते ।

वनिये बोला ने आवाज लगाई ।

“अबो वनिये लो, आपही से कह रहे रानी वार ।” पर-

वत गया ।

“नही भाई । अभी वर वरती में हैं ।” कह कर रानी भागे

धँसे उसने उभार का सीटिस से किया ।

से पनवाई फिलसाया, “पान से धोते जाइये ।” और रानी की लगे

“धँसे कही वार जी,” दूरी भी आवाज में कोने वाली रूकान

“यहाँ ठीक है यहाँ जाओ... यहाँ की हवा है और भी मधुर है। अन्त ही एक ही मरीज का मसला है। फिर दवाइयाँ यहाँ रहती हैं; और इन्हें भी ही इतिहास, इतिहास के दोस्त अन्तियों के लिए ही काफी नहीं होते।”

“राम राम ... कौन पणपण संगार है ... इकीम वेद इतर ... पंडित मीनवी प्रोफेसर... सब के सब मया में फूस मये है। अन्त-यम-म... है राम ... अन्त किया खानी वार ... अस्पताल ससे ठीक है।”

“इतर ?” रानी ने आश्चर्य से कहा, “इतना इतर लिखियाँ में बन्द है। आपकी नहीं मर्माय क्या ?”

“यहाँ तो ठीक ही है। वहाँ अथम है” यहाँ जाते वहाँ से मुँह बगलें हँसते कहते, “इतना भी मर्माय की इतर का भी मय नहीं है।”

“राम से कुछ बधाई खराब है। इतना ही यहाँ सरकारी अस्पताल में चलता है। प्रोफेसर इतरों की शोक तो आप जानते ही है।”

“है ?” राम के दो बड़े बगलें हँसते यहाँ जाते लिखता का प्रदर्शन किया, “अब लिखते कैसे है ? लिखता इतना कर रहे हैं ?”

“कुशल नहीं है ?” यहाँ जाते सहेलियाँ से कहा। “कुशल नहीं है। वचने की लिखते खराब है। सीधा या आपसे भी लिखता जाऊँ। क्या लेने आया था।”

“यहाँ बगलें यहाँ जाते ?” कर रानी ने बगलें सीधे जाते बगलें हँसते कहा। “प्रकार के संभावक यहाँ जाते ही ससे लिखता यहाँ मये।” प्रकार के संभावक यहाँ जाते ही ससे लिखता यहाँ मये।



आपने। ईश्वर जानता है। ईश्वर कागज कम पढ़ गया। जो  
 "सिरीज। पर अभी तो इसके तीन खण्ड बाकी है। आ

आप, 'सिरीज' के बारे में ही कुछ बन्दोबस्त कर दीजिये।"  
 "अभिमान भाग्यशास्त्र आप जानते हैं मेरी आदल के विभाज है। मुझे  
 याँ सरदी की चपट में आ जाएगा?" खनी ने कलह से कहा,  
 "अजबत मुझे आज है। क्या पता था कि हंसता खेतवा बन्ना

कुछ पढ़िजे कही होता तो....."

कुछ समय में नही आता; परना बंधा आपका बेदा बंधा मेरा।  
 परना खीचते हूँ चर्मा जी बोले, "कपड़ को न जाने क्या हुआ है।  
 "क्या बताने खनी बार्ब। आप यकीन नहीं करेंगे, मेरा का  
 "हाँ, दया के लिये।"

"कृपे ?"

पर खींचिये इस। मुझे कुछ कृपे चाहिये।" खनी ने कहा।  
 दो-चार की वृत्ति है। जालों की खिन्नी चन्द होपों का खिलीगोही।  
 "बजा है चर्मा जी। समाज के मीठवाँ शब्द में हंसवाँ की मूँख  
 देखनी चाही।

कम का ऐनक चढ़ाते हूँ चर्मा जी ने अपने कथन की प्रतिक्रिया  
 मूँख हो तो समाज का मानसिक जीवन है।" अर्थात् पर सने के  
 तो चीज में जान आ ही नही सकता खनी बार्ब। कलाकार की  
 "भई बार्ब; ये न हो तो लेखक लिखे क्या? जिना इनके

दृष्टिबन्धों और नीम-बेल-लकड़ी की किल्लों ही क्या कम है?"

दोपलोगा से तो मुक्ति मिले। लेखनी का गला घाँटने को मानसिक  
 "लिखने की तो बहिन कुछ लिखा जा सकता है। पर इस

धर्मा जी ने वातचीत का खेल बदलते हूँ कहा।"

"ठीक कहते हैं आप। तो फिर आजकल क्या लिख रहे हैं?"

पुसे हूँ ये तो इत्कार हूँ करिवा नही करेगा, " रजनी ने मन ही मन  
"कहाँ ? किसके पास जाऊँ ? राजे के पास ही क्यों न चले ?  
और मायब हूँ मैं ।

सावल भी उठे गया । रजनी के मस्तिष्क में कई विचार उभरे  
कापनिभक ही सही, एक आसरा तो था पर अब तो वह  
खोखले, छोटे-बड़े कुकामदार । प्रकाशक के यहाँ जाने से पहिले,  
इकके वही लीगी.....कुछ कुछ वैसे ही लीगा, कुली कवाली, झली  
फिर वही चहेल-पहेल भरी बाजार । बेज दीडली हूँ करे..... वही  
घड़ी ने दो का घण्टा बजाया और रजनी ने अपना राह ली ।  
"मना न करत ।"

"देते ही मना करे.....रजनी.....रजनी.....रजनी.....  
"कहाँ, "आपके पास पढ़ने के लिए क्या है ?"  
"तो पढ़ने का है लीगा । " रजनी ने हँसिया देते हूँ  
ललित, मायाग ने चाहे तो दे देते हैं.....

हे.....मना करे जाय तो ही । माग मागते हीन घण्टे कर  
विचलित । विना धरती के माती जात कही पड़ी है । मुझे हूँ ख  
रजनी जाने, इत्कार इत्कार भला करे, भरे पास पढ़ने के वैसे ही न  
पढ़े । "मना ली ने पढ़े कलाते हूँ कहते, "देख मयाग तो  
विचलित हो करे ।

पढ़ने ही के ललित । कुल तो काम नहीगा ही । " रजनी ने  
बचत में ही पढ़ने का माग ? माग मागते हीन घण्टे कर ही  
काम में पढ़ा तो मागते हीन घण्टे कर हीन घण्टे कर ही । उस एक  
और हीन घण्टे । मागते हीन घण्टे कर हीन घण्टे कर ही । मागते हीन घण्टे  
"पर पढ़ने तो विचलित मागते हीन घण्टे कर हीन घण्टे कर ही ।

जबान है रजनी जाने । " रजनी ने  
पढ़ने का पढ़ने हीन घण्टे कर हीन घण्टे कर ही । मागते हीन घण्टे कर ही ।

"देम ! किसका ?" कहकर राज ने कड़कड़ा लगाया ।

हृद्य कहा ।

"राजे दो राजे.....जरा हम लो लो !" राजी ने टोकते

आप, सब....."

हे । मैं आपको साहित्यिक मजदूर कहता हूँ । क्या खूब लिखते हैं  
 मेरा मतलब है आप शहर की आल है; महकिलों की रीतक  
 सादेव के सादेवबादे । बचे आप, आप भी एक ही जीव है ।  
 मेरे लपक दोस्त मिस्टर प्रदीपकुमार, महाहर उद्योगपति देवेला  
 होखिल है । मरिस की स्टूडेंट है; क्या समझे ? और आप हैं  
 आपसे मिलिये, मिल देंगे । बाबलिन बजाने में आपकी कमल  
 "ओ. के. सर । और हाँ, मैं लपक कराना ही पूँज हो गया ।

"कूछ मही !"

"तकलुक मही पादेनर, साओगे क्या ?"

"तकलुक न करी राजे !"

से कुर्रों लिखकाले हूँ एक प्यारे के लिये आडर दिया ।

"हरेली.....राजी लिपर । बंदी भाई जान, " राजे ने लपक

"राजे !" राजी ने धीरे से कहा ।

समझ रहे थे ।

बाब राजे बाबू बडे हूँ थे । सिगरेट का धुँआँ सोरे होल में  
 पहुँचने में उसे मुश्किल से पाँच-साठ मिनट लगते हैंगे । मास की  
 हरेव की बंधनी कम हूँ । परी में जान आई । काफ़ी-होउस  
 राजी की ओले प्रसन्नता और आनन्दोप से समक उठी ।

से.....उसके लिये पन्द्रह-बीस रुपये माँगनी बात है ।"

कहे, "लिकड़मी आदमी है । बीमा एजेन्ट ठहरे । कहो न कहो



“... ..”

“... ..”

“... ..”

“... ..”

“... ..”

“... ..”

“... ..”

“... ..”

“... ..”

“... ..”

“... ..”

“... ..”

“... ..”

“... ..”

“... ..”

“... ..”

“... ..”

“¿ En qué parte de la ciudad se encuentra el templo?”  
En la parte sur de la ciudad, cerca del río, en un lugar muy hermoso.”

“¿ Cuánto tiempo se tarda en ir allí?”  
“Apenas se tarda en ir allí, a lo más un día.”

“¿ Hay allí alguna otra iglesia?”  
“¿ Hay allí alguna otra iglesia?”

“¿ Hay allí alguna otra iglesia?”  
“¿ Hay allí alguna otra iglesia?”

“¿ Hay allí alguna otra iglesia?”  
“¿ Hay allí alguna otra iglesia?”

“¿ Hay allí alguna otra iglesia?”  
“¿ Hay allí alguna otra iglesia?”

“¿ Hay allí alguna otra iglesia?”  
“¿ Hay allí alguna otra iglesia?”



इस लिटरेच से लोगों का गुस्सा मुतासिब भी था। वह तो किये लोग महेज डाक्टर से ही बदला लेने की बात कहे रहे थे। अगर कहीं वे अपनी वे आ जाते तो डाक्टर की बीबी को भी लिखा था मुर्दा ललव कर सकते थे। और लडंका—डाक्टर साहब का डक-

उदाहर कहे होला।

हेतुमान न होवे तो लंका फल कहे होला। सीता माता का उद्वेग नहीं हो सकता। बाबर सेना और उसके कमाल-कन-वीक है। आकलन तक हम और हमारी आबाद उनके अहंसाओं से मरण हेतुमान के खानदानों किसी बन्दर की देखा मत कोई मजाक उठा मत दिया था। और यह कोई मामूली बात न थी। राम डाक्टर साहब का कहर था तो यह कि उन्होंने एक बन्दर की

की लाला की घरे लोगों की धर्मिकता उभार रहे थे।

टाट के पत्तों में आ जाते। और कहर के नामी-गिरामी मुझे बन्दर माता से फिजा में लाला यज्वं देला तो यह भी देकलें बन्द करके लाला लोगों के लिये खर्चें बना पदम बना ही सहाय था। मुजल-थे। मला खोलाए शिवाजी ता, और वे में कीर्तियम पितासे वाले दिने शक्तिमान पडिल ही देकलें बन्द करके मजान में आ मिले

उपार उदाहरे यह और भी देकलें शक्तिसे मिले।

हेतु मान न होवे तो लंका फल कहे होला। सीता माता का उद्वेग नहीं हो सकता। बाबर सेना और उसके कमाल-कन-वीक है। आकलन तक हम और हमारी आबाद उनके अहंसाओं से मरण हेतुमान के खानदानों किसी बन्दर की देखा मत कोई मजाक उठा मत दिया था। और यह कोई मामूली बात न थी। राम डाक्टर साहब का कहर था तो यह कि उन्होंने एक बन्दर की



सोना देना-पार करण का राशीव, वह भी पहिले ही स्वीय बन्द  
महीत्य की कृपा से निगलिते से शीव आ गिरा था ।

दिवाघिन के फटक बन्द थे । दीगर महीतों और अतने  
बकी बन्द के साथ शरीर साहेब अन्दर थे और बाहेर मजबूत  
गुफान उठा रहा था । अन्दर साहेब पर भारी और स्त्रीयों का  
कोई अमर न होवे देव एक दो साहियान कुल्हाड़ियाँ भी न आये  
थ और अफवाष का गेट तोड़ने में जाँधे । किस घुँम के साथ  
फटक तोड़ा जा रहा ।

दही शीव शीत के दरोगा जी कूँष सिपाहियों को साथ  
लिये आते दिखड़े लिये । उन्हें देखते ही एक साथ सबकी गर्दन  
घुँम गई । मजबूत के शीव से गिरा जग, "शरीर की जाय-लेके  
रहे, लेके रहते ।"

ले फूट के दरोगा जी पर जैसे ससका कूँष अमर ही नहीं  
है । वह दगावारी है फटक की तरफ बढ़े और मजबूत में फाड़  
भी फट गई ।

थे पर जो साहियान कुल्हाड़ियाँ चला रहे थे-दरोगा जी की  
देखते ही सब ही गये । कुल्हाड़ियाँ उनके शीव से छूट पड़ी । उन्हें  
सिधकते देव दरोगा साहिव ने सिपाहियों को दगावारी दिया और वे  
भाड़ी कर लिये गये । लोगों के चहुँबोया पर जैसे पानी पड़ गया ।  
"यह मामला है ।" अन्दर की जाय की जाले की ओकर से  
उठीयते है दरोगा जी ने पूछा ।  
सब एक दूसरे का मुँह देखते गये । किसी धमिया के मुँह से  
बोल न पड़े ।  
"देखे याने ले चली ।" दो गाने अगानों की उन्हीने श्रवण  
दिया और मजबूत पर सरेखरी दूँडि उठावी ।

तुम्हें होना ।

को समझिए, वह एक नया प्रसिद्धि का  
साक्षात्कार है और सिद्धांत का प्रमाण है कि वह एक  
सुप्रसिद्धि का प्रमाण है कि वह एक

तुम्हें होना ।

साक्षात्कार है और सिद्धांत का प्रमाण है कि वह एक  
साक्षात्कार है और सिद्धांत का प्रमाण है कि वह एक  
साक्षात्कार है और सिद्धांत का प्रमाण है कि वह एक  
साक्षात्कार है और सिद्धांत का प्रमाण है कि वह एक

“.....तुम्हें होना । तुम्हें होना है, तुम्हें होना है  
तुम्हें होना है, तुम्हें होना है, तुम्हें होना है, तुम्हें होना है  
तुम्हें होना है, तुम्हें होना है, तुम्हें होना है, तुम्हें होना है

। तुम्हें होना है, तुम्हें होना है, तुम्हें होना है

। तुम्हें होना है, तुम्हें होना है, तुम्हें होना है, तुम्हें होना है

। तुम्हें होना है

तुम्हें होना है, तुम्हें होना है, तुम्हें होना है, तुम्हें होना है  
“तुम्हें होना है, तुम्हें होना है, तुम्हें होना है, तुम्हें होना है”

तुम्हें होना है

और धीरे-धीरे | कारखाने के दूसरे कारखानों की तरह ही  
 और धीरे-धीरे की समझ लेकर सामान्य की कल्पनाकर्ता में अपनी  
 धीरे-धीरे का समझकर विचार विचार विचार विचार विचार विचार  
 से हैं । हमें समझते हैं, वाक्य और धीरे-धीरे अर्थों के विचारों-

मयानक था ।  
 केवल धीरे-धीरे फंसना—फंसना, जिसकी कल्पना मूल्य से भी अधिक  
 के साथ ही मुहलत की मियाद खत्म हो रही थी । रोप था वो  
 अनेक धीरे-धीरे अफस से निज वन विगड़ रहे थे; क्योंकि दिन  
 काफ़ूर हो चुकी थी और सूर्य पदम पर विगत और वसंत के  
 आन्ध्रलित किशु डाल रहे थे । जीवन की आगिज आशा-आकांक्षा  
 धाय धीम, निराशा और मर्यादा के अनेक भाव उषकी आशा की  
 की उषकी बरू रही थी । हरेम की बेज होनी पड़कराने के साथ-  
 साथ का धीरे-धीरे अशा-अशा पना हो रही था धीरे-धीरे धीरे-धीरे

जब पथर ने शोषित हो

जा रही थी ।

वैसी मादकता, जिसे राज के डर परपर में वसने की कोशिश की थी, आकाश में, जमुना की लोल लहरियों में—ठीक उस मधुर प्यार वशी हुई थी और सपनी फिशा में एक अजीब मादकता—धरती मन्मथ से खड़े थे । देवा के मदमत्त झोंकों में एक रेखा भी सिरहन से बही जा रही थी । सितिल में दूर तक फैले हुए वृषों के झंझुर रह जा । सितारे मुक्त हो रहे थे और जमुना अपनी मन्थर गति नीले आकाश में पूर्णमा का चाँद अपने पूरे वेग से दोड़ जा

फिशारी के वध की तरह ।

उठ रही थी—जमीन की सतह से डर राज उभरती आ रही थी, नजर आ रहे थे । और मकर की कुलियाँ इकतवाव की तरह दम लेने की कुसरत न थी । सबके सब अपने अपने देव से मशगुल होने में लगे हुए थे । सितारे, वावर्षी, राज, मधुर फिशा की भी से एक दृष्टि भी न्यून होत न थी । जलानों के देव के देव परपर खरत थे, और ऊँच देवों के फारीगर परपर पर मकराओं के एक मशालों के शूलित प्रकाश में संभारण परपर तराशने में

शरदियाही की झलक पर कर रहे थे ।

फारीगरों के डर सिर उठाये, अब चाली गत में सिमाखालिब बनी अगिमत चहुँपे सितारे पड़ी थी और उभरते शीत बहने बहने शरदिर उभारत न ही हुई है—संभारण की आँसू-सिरडी झंझरी-जमुना की मन्थरत प्रखरणी में बहने आन भोगमहेतव की

की अन्तर प्रकाश सितार आ रही थी ।

एक नया कलियुग उदर होने आ रहा था, एक नया युग की शरदिर मन्थरता की शरदिर आया है, नई फारीगरों की शरदिर में गहरी है डर । और अपनी मन्थरत शरदिर में डर ! शरदिर

न जाने क्या सुराही उठाते ही उसका चेहरे पर पल भर का प्रसन्नता नाच उठी और दूसरे ही पल उसकी बर्त बर्त नीली आँखों से आँसू गढ़े चले । इसके बाद वह खड़ा न रह सका और बैठे-बिठाये में फिर दवा कर बैठे बैठ गया । कीन जाने किसी की

धुआँ था और एक डेरानी सुराही ।

एक पीटली से बाधा । इनके अतिरिक्त बकरे की खाल का एक के बन्द कपड़े, एक छोटा सा डेरानी कालीन और दोल सजी की अपनी मखमली बूड़ी की भीतरों के डेवाले किया । पहिले बर्त, भाँटी-पतली कर्षियाँ की एक मुँह से कपड़े में लपेट कर उसने सोच कर वह उठ बैठा और अपना सामान समेटते लगा । छोटी-बड़ी सब डेरानियाँ सा एक टुकड़े खरीदा । फिर न जाने क्या करीब नें फिर उठा कर धोल पर टाँच डाली और बर्त डेर

में बतरीब पड़ी कर्षियाँ ।

पर रहे खरल में एक मुँहदेला सा धोल था और खोसे के दूसरे कीने भर भाँटी संगमरमर की एक बर्त खाला बिछी हुई थी । खाला उभरी खाला और विपाद की रेखाय थी । उसके सामने बाजिदब दिखाने दे रहा था । पसीने से तर पेशानी और माथे पर क्षण-क्षण विराय के घुँमिल प्रकाश में उसका उतरा हुआ चेहरे साफ

बतकाय वह इस सबसे बेखबर बैठा न जाने क्या सोच रहा था ।

साधना भी खलकर राख ही रही थी । अपने खोसे में उदासी से मुँह खाला में उसकी अगणित आधा-अधिकाय, और पुरी तक कि भाँचकला और सहज मस्ती ही बैठा था । जीवन के कटुतम संलय की लिये न था । वह तो अपने जज्बती रूकान में कलाकार की लेकिन यह शीशिय, प्यार, फिरदन और मादकता शीराब के

हुये औरतब से सवाल किया ।  
 "काम पूरा हुआ ?" सहेनशाह ने स्वर में कफ़सला करते  
 मुसादेब ने धीमे से कहा ।  
 "बढ़ीपनाह ! मुहेलव की मुहेव पूरी हो चुकी है ।" एक

वर्षों बिगाह मिलाने की जुरत कहा थी ?  
 उठा था । ओठ कांप रहे थे । मगर औरतब में था किसी में भी  
 हँसते ही भाव था । माँहें लगी हुई थीं; ममगीन चेहरे लपलपा  
 और गुलामों से फिर हुए थे । लेकिन आज उनके चेहरे पर कुछ  
 हेमसा की तरहे आज भी मुगल सखाट अपने मुसादेबों, बजोरी  
 बाख़दर, बाग़ुलहिशा, हरेबाग़ुल तीन बार सलाम झुकाना ।  
 आलीबाहरे रोम के लिफ़्तव निकट आ गये और औरतब ने

रहे थे ली-सपी औरतब की बचनी बर्तनी जा रही थी ।  
 अब गिरा अब गिरा । मुग़ल सखाट बर्तनी-बर्तनी नवादीक आते जा  
 वरहे कांप रहे थे; फिर बकरी रही था; लप रहे थे धीमे धीमे  
 बर्तनी हुई बकरी गुलामों की बुराई करने लगे थे । पर वुरी  
 धमपान की और औरतब धीमे धीमे से आगे पड़ा । रोम की तरफ  
 सहेनशाह के आलीबाहरे के आगमन की उम्मीद करते रहे

जा गये थे ।

औरतब की धरती झुलक गयी । रोम में बचनी बर्तनी लप रहे  
 हे बा बचनी बर्तनी, गुलामी, गुलामी बर्तनी बर्तनी ।  
 उम्मीद बचनी बर्तनी बर्तनी बर्तनी बर्तनी बर्तनी बर्तनी  
 मुसादेब ने धीमे से कहा : मुसादेब ने धीमे से कहा :  
 मुसादेब ने धीमे से कहा : मुसादेब ने धीमे से कहा :  
 मुसादेब ने धीमे से कहा : मुसादेब ने धीमे से कहा :  
 मुसादेब ने धीमे से कहा : मुसादेब ने धीमे से कहा :  
 मुसादेब ने धीमे से कहा : मुसादेब ने धीमे से कहा :

“शाहीदाहे आजम का फंसना, खूदा का हिम है। इतिहास

दीवाने में समझना उठे। सधाट यह देखकर राजकुमार में परं गये।  
 से ऊपर अशक्ति, जो उसे अब तक मिली थी, मंगलाने की वेव  
 शीराज ने अपना ध्यान उठाकर उनके ऊपरों में लीटा दिया। हजार  
 और इससे पूर्व कि शाहीदाहे के फंसने पर अमल हो गया,  
 फंसना सुनाया।

दीवाने के इस कृत को अभी जमाना में फूंक दो।” सधाट ने  
 “करेव और गुस्ताखी की सजा मौत है। हाथ-पूर बांधकर  
 ही कहे सका।

“आलीबाहे.....” शीराज नीची गर्दन करते सिर्फ़ इतना  
 मारी-मरकम आवाज में कहे।

“तुम अपना ज़ुम इकबाल करते हो ?” सधाट ने अपनी  
 पनाह। ताकि दूसरों को नसोहिव हो सके।”

“आलीबाहे ये सरासर करेव है। गुस्ताखी और इकूम-उर्दली  
 की मुनासिब सजा मिलनी चाहिये। इंसान का लकाबा है अहे-

पर लसली न हुई थी। तब तक एक मुसाहिव बोल उठे—  
 शीराज के अर्थ बदलन पर 25-25 पिरने जने। आलीबाहे की इतने

सारा धोल संगमरमर की उस बदलन पर फल गया और  
 बाले, “यह है।”

अब तक का काम, खरल पर डीकर जमाते हूँ मुगल सधाट  
 “दी मर्दा गुहरे मुहलत दी गई। ये लीखरी वार है। और

न कहे सका।  
 करनेवा चाहे।” लेकिन चाहेते हूँ थी वहे इससे अधिक कुछ

“अदीपनाह.....।” शीराज ने प्रकटिपव स्वर में कुछ





“एलीस ह्वार ! हे इन्धर !” आमा ने लयी घांस की,  
 वसे वाटरी में थी भावान का दखल हो, “तब ही उन्धरी के  
 विराग बल गये !” उबने धीरे से कहा ।

गरी बनवा ।  
 मने कहा । मेरी भागसिक दगा क्या हो रही थी, गहरे में स्वयं  
 “अरे गरी क्या मूठ ! देख लो न !” तार बघाते हिये  
 स्वयं प्रयत्न-सूचक चिह्न बन गये ।

“सब बगाने ?” मेरी आंखों में आये डालते हूँ भीमती की  
 मेरे नाम वाटरी है । एलीस ह्वार की वाटरी, आमा !

खीसा ! एलीस ह्वार ! मेरे मुँह से निकल पडा, “आमा !  
 “देरे माया ने” भीमती की पर दृष्टि डालते हिये मने लिकाका  
 प्रयत्न किया, “लियाँ बजा ऐ ?”

“वाह ! तुमना ताल आया है,” तार बघाते हिये मुनी ने

आमा के दीप

“यहाँ नहीं राती ? पूजा होय से आना एक बात है और पूजावादी मनोवृत्ति का हीना एकदम हुआ जाती बात । मुझे उनका पूरा पूरा ध्यान है । उनकी परेशानियाँ मुझसे छिपी नहीं हैं । अब से मैं उन्हें पाके नहीं करूँ दूंगा । दुनियाँ का कोई

मित्रों का भी क्याल रखोगे न ?”

“हाँ है । कौजिय, ईश्वर ने चाहा तो सब जायगा । मगर लेखक “क्याल तो अच्छा है । हिंदी में अच्छी पत्रिकाओं का अभाव

जाय । साथ साथ थोड़ा बहुत प्रकाशन भी करूँगे ।”

“आपों तो कुछ नहीं, पर सोचता हूँ, पत्रिका यहाँ न निकाली

“निकर क्या लय किया है ?” आशा जाती ।

जादरी से कौन लिखती कट जायगी ।” मैंने कहा ।

“बात तो ठीक है । निकर भी कुछ तो करना ही चाहिये ।

नहीं खरीद कर रखना है ?”

तब भी वक्त से धैर्य नहीं । हरे वक्त परेशानी ही परेशानी । खलते “खुद ही की उम्र में धरती गया है । दिन रात मरी-बपी और

“क्या ? क्या रख है, अजय-नारी खीड़ है ?”

“कहाँ क्या रख रहे हो ? अब भी खबर जाया करोगे ?”

समा तो सब रहे थे ।

“खुद ही खरीदें ।” कह कर भी कभी पर नृत्ति जाती ।

रुँधे कल ।

“और क्या होगा ?” आशा ने प्रश्नना से शीतल नवाते

प्रायः मैं एक धारा भी नहीं दे और कौन पत्रिका रख गये ।”

“खुद ही तो लिखो वक्त जब आये, मुझसे भी । अभी तो

कल्पना ।”

“बाई ही ।” आकर से निरन्तर लिखना, “खुद ही खरीदें

वेधारी को इस री-ब-रीज को जेडंगीठ से मर्कित मिल जायगी ।  
 आना मुझे धागा जल जाई और मैं सोच रहा था, "अब तो  
 जागा है ।"

मुझे मनें कहा, "करो भाई मरुम पड़ी । अभी तो इसी से काम  
 से पहिले धीरे-धीरे करामत देख लीजिये ।" पजामा लीटारो  
 "देखो वेधारे की और भी बहुत काम है । अपने देधारे  
 तो बहुतैरे वन जायगे ।"

"ये लीजिये", पजामा देखे हुये आधा बोले, "देखो ने चाहो  
 पता, जैसे मुझे अपनी आंखो हरे विधास न हो ।

धारी प्या देतो है ?" कहे कर मनें बार उठा लिया । कहे बार  
 "वह फिर रहने दो । अकारण देर होगी । लोभी, पजामा  
 कर देगे । पाव भर धाकर भी से लेना ।"

"देख तो हूँ नहीं, से आओ न । दोपहर की राधे का हिसाब  
 निकालो देर करो ।"

"तो सक तो बरा चाप भी बना दो, रानी, बड़ी पाव नही  
 जाऊँ ?" आधा ने निरुधा से कहा ।

"कपड़े ! करवा तो एक भी नही है । कहिये पजामा से  
 जाऊँ । सिर्फ बीच मिनत बाकी है उस बजने में ।"

"पह तो होला रहेगा । कपड़े निकाल दो तो बरा बंक हो  
 धीले साहिये ।"

कर । धोडा बहुत धान दे और फिर निकालिये पत्रिका और प्रगति-  
 धर्म-वर्ग खिंचे हुये आधा से कहा, "महीने दो महीने लीप-गामा  
 "देखो ने धूसा दिया है तो भले काम से लगाना ही चाहिये,"

अब कोई भी प्रकाशक कहिये में न खरीद सकेगा । उनको कतिपय  
 पत्र-संचालक उनकी खिचनी पर होवनी न हो सकेगा । उनको कतिपय

मुझे मैं बार बचाये मैंने बैंक की राह ली । मैं...मेरा मन...मेरे पांव चढ़ जा रहे थे, जैसे कोई अपमान हो । मेरे लिये यह लाटरी सचमुच ही लंका-विजय से कम न थी । भगवान राम से भी क्यादा होसले और उमंग मेरे मस्तिष्क में करवट ले रही थीं । छत्तीस हजार की रकम थी भी कम नहीं होती और वह भी एक दिन्दी लेखक के लिये । चाहे तो अपना कतिपय स्वयं प्रकाशित करे, पर

बलते बलते मैंने कहा ।

“पर वह तो मैं तुम्हें क्याम में दे चुका हूँ । क्या समझीं ?”

मुत्कराई ।

“क्यों नहीं ? आपकी लाटरी में मेरी क्या ?” आशा

उभय किया ।

“होम मिनिस्ट्री को मेरी भी क्याल है न ?” मैंने

“कपड़े तो मैं देखकर ही खरीदूँगी ।” आशा ने मुँह बनाया ।

“पर क्या ? कही न ।”

“मंगलन की तो बहिन भी चीजें हैं पर.....”

“और कुछ ?”

मिगन-मिगनी भाव उठी ।

पर लज्जा की अस्मिता खींच गई और उत्तक सेवन पलकों में “बता देती । बड़े धरु है आग ।” कहते हुए उसके कपालों

की आजा ? मुँहें धरु है न अर्पुटी मुँहें नम हो थी ?”

“कह रही है । आपकी अर्पुटी भी.....” मैंने कभी मजबूतियाँ

बलते धरु कियाई ।

“मेरी अर्पुटी और मुँह भी खूबसे लाटरी ।” आजा ने बलते

धरु है तो चीजों का धरु है रही है ।”

कभी धरु है तो गफन नहीं । धरु ही धरु है तो धरु नखाते ।



“बुन्देली हुआ कुर्बल हो गई मौलाना । अब कम से कम अपने आप, अदीब और दीनार महानकश साथी, हिकारत और खिलत का बोझा न ढोये। जबका अपना रिसाला होगा। मौलाना.....हमारे लई और पसीने की स्पही से अब हकीकत सामा होगी और हमारा अखबार.....जानता की अखबार, जानवादी तहरीकों की हिमयत करेगा।” भाववेश में से एक गया ।

से कहा ।

“मालिक आपकी सलामत रहे।” उधने पड़ी दयनीयता  
 “वापू जी !” मौलाना की आँखें ऊपरवा से छलक उठीं;

बड़लते हुए कहा ।

“अब मैं अपना अखबार निकालूँगा । और गुम.....गुम भी अपने रिसाले में काम करता । क्यों ठीक है न ?” मुने अपनापन

“बधा आपकी बरफत है ।” मौलाना ने हुआ की ।

“वे क्या हुआ ? बुन्दे मार्गम नहीं थापर । मुझे खलिब खार की तहरी मिली है । खपा अभी कुछ देर में मिल जाएगा ।

वे खलिब हो तहरी है ।” उधने आसप से कहा ।  
 लिख जान होलिरे है । अखारत जानता है, भाषे जी । मगर आज

“तहरीत । आप ही कहीं भास करत है भाषे जी । आपके

“अब भाषे । लिये से आये अब कुछ भाषाये गये।”

उधने कहा ।

“और कुछ भाषे जी ?” भाषे जी का माता बड़ा ही शुक

लिखा था ।

का भास हुए फकिर शीम । भाषे ने मौलाना की शुक  
 कह करत है । भास अखबार अहली है.....और भी, आपकी फकिर  
 उधने भाषे का उतर । तहरी भी भास ? तहरी तहरी तहरी भास



मगले ऐ ।"

"मुझे जो", मुझे ने सुनना है हूँ कहे, "बिना के रहे  
जाने से पहिले ही कुछ गये ।"

"कहानी तो आई", मेरे मुँह से निकला, "आपका कौन  
असमर्थ है । रचना अत्यन्त उच्छेद है ।" उसने लिखा था ।

"खैर है पत्र की रीति-नीति के अर्जकल न होने से प्रकाशन में  
लिखाका खोज ।

"मेरे माता ने ।" श्रीमती जी पर दृष्टि डालते हूँ मैं  
प्रश्न किया, "किसने बोली ऐ ?"

"बापू । आपकी बिली आई ऐ," लिखाका समाते हूँ उसने  
होप में एक वरुण बिस्वी लिये मुझे खड़ा था ।

आज खैल गई ।

हो पाता होप से छूट पड़ा ।

करती हुई श्रीमती जी बोली आ पढ़ती । उनकी दयनीय मुद्रा देखते  
सहसा फटे बरतों में अपना परीर छिपाने की विफल चेष्टा  
"दयाकरता ।" और भीतना ने सर झुका लिया ।

पर दाद दी ।

"मुद्रायो दयादिप पूरी हो ।" मैं भीतना के होसते  
लिये मरने ।"

प्रतिक्रिया व्यक्त की, "किस और बेदाद धरमजीवियों के  
"हम अजाम के लिये जिन्दगी," भीतना ने भरे हूँ फंठ से

कमल का । भव-वध में गड़बड़ करता है । लील लीलता है और  
"और वह रत्नीगी आता । नकद पैसे हों तो नाम भी न लूँ

आरती गीसाईं भी ।"

रत्नी भर सहेरा नहीं किसी से । हँसी उड़ाने को सब है—वह  
पड़ोसी लोग है । जो चाहता है मुँह भी न खेँव किसी का ।  
बोलता है उलटा पलटा । घर घर जाकर पैसे का रोना रोयेगा ।  
ने दूध बन्द कर दिया है । बच्ची का क्या होगा । धोती आता  
"कैसे चलेगा पूरा महीना । क्या करूँगा उनसे ? दूध वाले

चौराहे पर खड़ा खड़ा भिनभिनाया ।

लोगों के लिये नहीं है । एकदम नहीं है ।" दत्ता हीरोट रोड के  
को । किस कदर पतन हो गया है आरती का । दुनियाँ में रे बैसे  
को मिली । मिली न मिली सब परावर । आग लगे ऐसे कार्जन  
अजीब उलझन है । तनकहाइ इकतीस की उर्म थी । आज सब  
"आक ! यह क्या हुआ....." कुछ समझ में नहीं आता ।

दुकाँन के बाहर





समय से बहुत पहिले वह बूढ़ा हो जा रहा है। लीस बनीस की उम्र भी कोई उम्र होती है। मगर वहाँ अभी से बालीस बालीस का लगता है। शीशा वह जान बूझ कर नहीं देखता, क्योंकि उसे हकीकत का एहसास होता है। कुछ फायदा भी नहीं है। बालों का गिरना वह रोक नहीं सकता। चेहरे की झुर्रियाँ पर उसका कोई बस नहीं है।

पढ़ी थ से सवाल जो अक्सर सीते-जाती, बर-बाहर, अक्सर में उसके सामने मुँह फेंकाकर घड़े हो जाते हैं। घड़े रखते हैं उस परत भी जब वह अपनी कशकाम पताचणी परती की उठती ऐसी ब्राह्मी में फिर टिका कर बच्चे की तरह रो पड़ता है। जब वह गुजारे और आइसक्रीम बाल की आवाज सुनते ही बच्चों की बदलाकर घर के बाहर ले जाता है और उन्हें तरह तरह से फूस-लाने का प्रयत्न करता है।

एक एक करके उगर्ते गध और उनका कोई अल ग था। वहाँ से दूर आड़ियों के अधिपति में रूँटि कंगाली। हुआती प्रसन्न हो पूरे लीस दिन और है। कर्तवीरों दिन मिलनी। अब तक ?" काम देर महीना लीस दिन का होता। उठे होना। अपनी बगल में बैठते ही देखियाँ में फिर आम लाम। "मिलेन लीस का है। "एक दिन था देना ?" दान में पाके ली रूनी ब्रेन पर

लाप देना का बर हो आडिये हो। आलों के लिये बड़े गुलीय देना है उगरी होनी। मगर उगरी ली कानाम ली कडमा हो। कानाम रूँटि के बर का लिये लीन के दिन है। मगर उगरी से भा। कडिये से भा। ली बाल-दे। कडिये बरभा उगरी से भा। महीना ? कडिये परत ? रूँटि-पुंन नहीं है। पर लीन कडिये भा। लीन कडिये भा। महीना की भी भावी आन हो उगरी ली रूनी भा। महीना कडिये भा। महीना की भी

राज के सवाटे में बड़े घर की सीखियां पर चढ़ रही हैं, ऐसे बंसे कुछ हुआ ही न हो। सीखियां से उतरते हैं एक नौजवान की देखते ही बड़े कुछ ठिठका। निगाह जो अब तक बर्षान पर टिकी थी। ऊपर उठी। उसकी आँख नौजवान की आँखों से मिली

बाली परिरिथियाँ के लिये तैयार कर लिया है।

उसने निगाहों की गहराईयों को देखकर ही या फिर स्वयं की आँखें सीटने बालों की चाल में होना है। लगता है इस बख्त या तो बँफकी या कुमीनान है बँफकी बहिन-सुन्दर के बाद समाधान से होठों का कम्पन रुक गया है। उसकी चाल में कुछ कुछ बँफकी ही उसकी चाल में एक चूँचला है। माँ की सबकुछ मिट गई है।

बाले एक महीने की देखता हुआ बड़े पाक से बाहर हो गया।

को एक बार फिर से टलीला और फिर कल्पना की आँखों से आने और से बनाई गई गांधी जी की प्रस्तर प्रतिमा की देखा। अपनी जब पाक की सुनसान बँचों पर उसने नजर डाली। स्मारक लिपि की बार लिये की कल्पना हुई ली कुछ देर के लिये स्थिर हो जाती है। की बँसे एकदोरेते हैं उठ खड़ा हुआ—बँसे ही बँसे आँखों के हँस और मस्तिस्क बाँधिल है लेकिन दली अपनी समस्त चेतना

उसके लिये खलब है।

ही ली दीवार भरभरा कर गिर पड़ेगी। और इसकी कल्पना भी सदा ही है। बड़े जानता है, नीच ने अगर अपनी जगह छोड़ देवस हँसों की तरह है जो खैर दीख से दबकर भी एक दीवार की न कर सकी। बापद इसलिये कि उसकी लिखनी, नीच की उन दर्जनों बार उसके दिमाग में आया भी मगर बड़े उस पर अमल बँचों के लिये बापद। खँदकीनी बड़े कर सकता था। ये क्यास ही बहो जीने का क्या मजा ? फिर भी बड़े जी रही है। दीदी लिखनी के लिये उस कोई चाम मही है। लिखनी जहाँ दीख

वर्तमान हुआ कि अंधेरे में खी गया ।

वक आ सका । अपना नाम सका । " और वह जल्दी जल्दी उगा  
लीकिया । अपना पीर कर काउ थी से लीकिया, जिसके संधेरे में थकी  
ठिकी । बोला, " मैं बेचकरा हूँ । उन देवी जो से अपना पसं के  
नलवाना जो आदितो सीरी पर कर सका था, पर भर की  
"उदिये । " । " पर से उसे देवीके हथे कही, " मैं समझा नहीं । "

हे । " कहते कहे पर देवी से सीरी से उतर गया ।  
उन मंडित से पूर लीकिया । मानन न था कि अपन अक्षयक  
" वी । " मुझ से ही कह पाता । " मुझे कुछ नहीं कहता ।  
" मैं ही कह पाता हूँ । "

" पर देवी से ही कह पाता हूँ । " ।  
उसने देवीके हथे कही से ही कह पाता हूँ ।  
" वी, मैं ही कह पाता हूँ । " ।  
" मैं ही कह पाता हूँ । "

" मैं ही कह पाता हूँ । " ।  
" मैं ही कह पाता हूँ । " ।  
" मैं ही कह पाता हूँ । " ।

उसने देवीके हथे कही से ही कह पाता हूँ ।  
" मैं ही कह पाता हूँ । " ।  
" मैं ही कह पाता हूँ । " ।

शीला-शिला से कहे रहते थे, अभी इस वक्त गढ़ें में करी । कमजोरकम  
 करते देखा था । यह पान की रखावी लेकर भरे पास भी आया था ।  
 यह खड़ा था । कविपुत्र और भद्रमानों को हंस-हंस कर रिश्वत  
 के समान में आयाजित कवि-सामान में भी बने उसे देखा था ।  
 लेकिन यह पान से ही कुछ उलझा-उलझा है । मुख्य मान्यो भी

सिगरेट पिनाये पिनाये जैसे जैसे बसन्ती ही नहीं मिलती ।  
 में-देखा वह इतनीमान से बड़ी मुहंवर से मिलता है । बाय और  
 जब मिलना-पुंस रूप में, लगी में, दफ्तर में, किसी मीटिंग  
 देखाया खीसा से बमकता रहता है । आदमी निहायत विन्यादित है ।  
 होगे भी सवासी । मगर इतना मरने-खपने के बाद भी उसका चेहरा  
 एक ध्यानता है । रात की लीकल पूज सहेलना पड़ता है । मिलने  
 हैरात की रिपर्टरी करता है । मुहं से शाम तक शहर भर की  
 शिला को इस ऊपर परेशान में कभी नहीं देखा था । डली

काला और काली

दिमाग में घूम गये । एक पहेली सी बुझाता मैं घर लौटा ।  
 मुझे कपयों की बात याद आ गई । कश्यप और कवि-सम्भवन मेरे  
 से सायकिल दौड़ाता चौक की तरफ जा रहा था । उसे देखते ही  
 सखी खरीदते वक्त मैंने उसे मुड़न रोड पर देखा था । वैसी

श्रीमती जी का और वह मेरा मुँह देखती रह गई ।  
 बल्की सीढ़ियों से उतर गया । चाय भी नहीं पी लपके । मैं  
 इन्तजाम करके रखता । दीपदेर की आऊंगा । " कह कर वह बल्की  
 "अभी नहीं है तो न सही । बारह मेरे पास है । बाकी का

क्या आ पड़ती है वह उसने बता के नहीं दिया ।  
 लेकिन कश्यप और वह भी इतलियन । उसकी एकदम खलल

"एक इतलियन कश्यप खरीदता है । पचास साठ में आया ।"  
 श्रीमती जी ने पूछा भी कितने चाहिये । जवाब में उसने कहा,

कमाल देना वह देगी है ।"  
 मामला नहीं होन करती है । कुछ पैसे चाहिये तो जब होलियर है ।  
 श्रीमती जी की ओर इशारा करते हुए कहा, "याहूँ कपयों का  
 "कुछ कपय है ?" मैंने कहा, "कुछ तो न उठे से ।" मैंने  
 फिर लिफटें बंद आया था । सोते में जागता मुझे । सोता,

सम्भवन में कुछ देते देता था है ।  
 उसने कुछ कहा भी नहीं । फिर भी मेरा खाल था कि कवि-  
 तो नहीं होता है । सोत में कुछ सम्भवन पास तो मुँहकल था ।  
 प्रवेशद्वार उलटा जागा अन्ध है मगर जब वह मुँह में नहीं होता  
 था था कुछ नहीं । सोत सम्भवन था सोते भला टाली गई है ।  
 कवि-सम्भवन की मुँह उठी न कहर की थी । मगर उसमें

पता आया—दौर कलियन गली ।  
 दो घंटे तो तो । लिफटें भी टूट गी । इन्तजाम है । एक घंटे

“जी हा मगर कुछ देर से पहुँचा था।”

“? हाँ”

वह कुछ देर और उनके साथी परमप्रेमों की सड़क पर  
सबमथाते हुए बैठ गया। काबल और कवि सम्मेलन की जगह  
कोसों दूरी थी, “कहिये पाव के फल सम्मेलन में तो

आता है।”

“कहिये” में से कहीं लिखकाले हुए कहे। “कहिये”

“मैं भी”

“जहाँ से मिलते आया है। खैर है कुछ देर लगा गई। फिर  
मुझे हावस में मिल गया था।” सोच महीन्य ने सफाई पूरा की,  
“जिस मन्त्री जी ने साथ में जलना लिया। मेरी और से आयी।

हो गया है।”

“सिद्धि आपका इन्तजार कर रही थी।” उनके कदम  
मसकाने के उत्तर में हाथ जोड़ते हुए मुँह कहे। “कुछ देर पहिले

हो था कि सांड सांडव आ यमके।

इतरवत में प्रेम कम गया तो मार्गम हुआ कि वह वहाँ पहुँच  
हरे एक काँच परतों के चौक ज़ेब सांड सांडव का इन्तजार करना  
रही था। लेकिन जगसे उसकी मुँसकाव न हो पाई। सोच रही  
था जल्दी से पहिले लिखें यंत्र हूँ। टायपरियटर से कर देना

वजह स्पष्ट होइँकर उसके पीछे जा सकता था।

गया। और मैं देखता रहे गया। वहाँ उसे सकता नहीं था। म  
काम से आया हूँ। इवनिंग कवर कर लेता। वह जल्दी से वहाँ  
थाले कपड़े थे। आकर मेरे पास खड़ा हो गया। वहाँ एक जल्दी  
मुँह धोया था न वहाँ की कधी की थी। फिरम पर वही रात  
रख से पहिले वह कॉन्सिल होउस भी आया था। न उसने

लौट रहा हूँ। देते गया था।"

उसने दोफाले हुए कहा, "कमजब मिल गया। आप ही के यहाँ से  
"धमा कौजिये सांड साहिये। आपकी बर्त कट हुआ।"

सुरकान के साथ दरवाजे के पास ही खड़ा था।

सोफे पर धरे बैठे थे। धूम कर देखा तो सिगरेट अपनी स्वाभाविक  
उठ खड़े हुए हैं। वह एम्पल्युमेंट सज्जन भी जो अपने गन्दे धरे  
कुछ ही देर में मने देखा कि सांड महीदिय और उनके साथी

स्वारी में कहे और उक तैयार करने में जात गया।

"हूँ। आपद वसीलिय सिगरेट परेशान हूँ।" मने अनुमान के

करते हुए कहा।

तक नहीं।" सांड महीदिय ने अपनी बंदेख जाकिट पर हाथ  
बात न थी। मैं तो आप जानते हैं कि मिल का कपड़ा छूला  
देला। दुख है कि वह कमजब मिल नहीं रहा। मेरा हीला तो कोई  
है। और फिर सिगरेट जो स्वयं आये थे। भला कैसे इन्कार कर  
"जाँ है। मने सोचा कि तो हमारी समाल की घरेदर

"ए ?" मने जिज्ञासा का जाल फँसाया।

बन्देख थी। आपद फिरो कवि की बर्त लन गई थी।"

"जो वह बर्तुव बाद में आये थे। बेचारी की कामजब की

आपके साथ।"

"हूँ" मने बर्तुवर्तिय के स्वारी में कहे। "सिगरेट भी तो था

समा था। घर बंद करने लगा था। इमलिय उठ आया।"

"बर्तुव बर्तिया। अलि मुन्दर। बाद की कवितायें नहीं मने

काम-काम।"

रहेते हैं।" मने पीछे बर्तुवर्तिय बने हुए कहा, "कविता काम रही

"कोई बात नहीं। बेचारी के साथ भी भूद मजबूरी लगी ही



मन्दीरवासी और जहाँ की एक बरती भी उसके मुँह पर था मुँह है ।  
 मरना भी दुःखदायक है ।" उसने वापसवाही से कहा और मैंने देखा  
 "अभी बार तुम भी रहे फिर बोली । अरे इसीलिए तो वह  
 मगर सिद्धि, "वही बहुत ऊँच ऊँच के माथे है ।"  
 "बली धरे मनाओ । सस्ते छूट गये । और दो, "मैंने कहा,

और सिद्धि मुँहका दिया—एक कीकी मुँहका रहित ।  
 यही फिर रोककर दोनों ने खाना खा लिया था । बहुत मुँह से ।"  
 हँसते हँसते कहा, "दिल भर परेणाम रहे, सदाकाल वाले मीलना के  
 सम्मिलन के बाद गया तो दोनों गायब थे, मय कल्पन के ।" उसने  
 धी-धीसे लिये कन्वल का दिया । सीधा था दिखने में सब जगहों ।  
 इतनीसे वापस वाले कमरे में धूँझा दिया । सर्वा रोच से जगह  
 धर । एकदम डरान थ । सीधा अन्दर से जाना ठीक नहीं होगा ।  
 "क्या बरतलूँ बार ? रात से दोनों ..... समझे ? वे अपने

आवाजों का दिया ।

"फिर भी । बरतलूँ न । किसी से कहूँगा नहीं ।" मैंने उसे  
 ही मुँहफट ।

"यह न मुँहों, "उसने सिनाइट बर्तले हँस कर कहा, "तुम आदमी  
 "मिला कर दे बरतलूँ ।" मैंने धीके धीके बन्द करते हँस मुँह ।

हँस बोला, "अभी बार सिद्धि, इस कल्पन ने तो जान मार दी ।"  
 से बाहर छिड़कर जल्दी ही लौट आया । मेरे धमस से था वज्रले

वैसे-वैसे उतकी संकषर खलम हुआ और सिद्धि जहाँ प्रसन्न  
 बरतले हँस कर, "समा-समाजनों में तो चीजें खो ही जाती हैं ।

जीवन ही साहित्य और समाज के लिये है ।" साह महोदय ने गर्व से  
 पहुँच जाता है सबेर । नहीं भी पहुँचता तो क्या—अपना तो

"बाह सिद्धि जी ! आप भी । अबी ऐसी भी जल्दी क्या थी ?

## बाँधी का गर्डआ

मंडला के दौर पर जति समय दूर ऊँची-नीची पहाड़ियों की छाँट में हमें आदिवासी गाँवों के उस नरहँ में, जति-पहिचाने गाँव मरुवा टोला के कच्चे झोंपड़े दिखाई दिव, जिसकी दूर तक छिन्ती हुई आवादी कुल उड़ सी है ।

उनकी अर्ध-नगना औरतें, और नंग-धरंग बच्चे आधुनिक सभ्यता से सवियाँ पाछे हैं । अन्ध-विश्वासी, बचन के सच्चे, धुन के पक्के और गजब के फ्राकेमस्त !

गरीबी से उनका सनातन-सम्पन्न है लेकिन इसकी उन्हें कोई शिक्षापत्र नहीं है । बर्जालाव महकम के अदना से अदना नौकर उन्हें बर-खरीद मूलाम समझ कर व्यवहार करते हैं, मरमनो डंग से वेगार लेते हैं—इसका भी कोई मिला नहीं । पास के कच्चे में बड़ी मंगल की षंठ का बाजार लगाता है उनकी मरुनत से चुनी चिरौजी सस्ते नमक की लीज बिकती है और उसमें कोई मील-भाव

अगर देव की सरकार बनाने की अभीर-गरीब, धरती थी।  
... पापद कभी सोचा भी न आता, अगर देव आजाद न होता।  
सोचा ही न गया था ।

मारा जाता है । पानी बन्दरत की चीज है, इसे सब स्वीकार करते  
हैं गीब का बूँदा आँखा भगवान भी नहीं बता सका, जो निकलतर्फी  
बता सकता । समय के बारे में अभी धारणा नहीं हो सकती है ?  
विन्दगी का यह कम कब से बला आ रही है इसे कोई नहीं  
के समझ से पानी बंदरत किया जाता है ।

सिर्फ एक बरसाती गला है जिसकी बन्दरती छोड़-छोड़ कर भूँदा  
पानी कम और कीचड़ ज्यादा होती है । कृषिक इनकी महीनदी  
है और दिन चढ़े लीटना । तीन घंटे सिर पर रख कर, जिसमें  
बर्षत के बीच से, जहाँ बूँदवार जलवरी का सामना आम बात  
घात मील जाना । ऊर्ध्व-बावड बर्षानी पगडहियाँ से, सुनसान  
महीनदी से इनकी आँखें पानी जाती है । रात के अन्तिम घंटे में  
गर्ज में भरे पानी से काम चलता है और फिर सात मील दूर  
पानी इनके गीब में सिर्फ बरसात में होता है । कुछ दिनों  
बादिये ! ऐसे ही महीनदी टोला के लीग ।

विन्दगी के गीब—करमा और दरिया—गीब के लिये और क्या  
बलता है । और दाल । मस्त होकर सारी-सारी रात गोबने और  
नी बन्पगुओं का मास-बीजा, बूँदा, मंडक, सप-सब कुछ  
बाराव बनती है । कोदो-कूटकी का एक जैन खाना । फूस जग  
कमल अच्छी है गीबे महीनदी बूँद हुआ; और महीनदी से कच्छी  
करीबी मील की ।

है, करीबी ती पर की चीज ठंडी—अधिकारियों के लिये  
नहीं हो सकता कृषिक, "सुन्दर सात सुन्दर पर से आती

कोटार हूँ ।

पवन लगाये कोटिदश जाती रखी और अतः उनको महान  
ने—हिन्दी, लक्ष्मीलक्षार, वीडोडो और गुणसंबक, सबने विना  
के उर्वरान का । जिसे के वड़े से वड़े और छोटे से छोटे अफसरी  
सबल रहें । अगले दिन शाम को मिनिस्टर आने वाले थे—क्यू  
आले लगाये गये । विजली का इंतजाम आया और सोरी रजि काम  
कई । फिर साइव लीम आये, गण-वोष हूँ । तरे तरे के  
उसका तल न दिखाने देता, लेकिन कुशल से पानी का सोल न  
गया—इतना गहरा कि दीपद्वारे में भी जल सूख जाय पर ही  
वही साय और उड़ महीने की महान से कृपा से वृद्ध

और फल जाते ।

हैं, विभव बढ़ते, कमी करी जाय के उठते, विचार करते  
किया । विचार की गहरा और गरी । गहरा लीम देते, पुत्र  
वही देखेंगे में भी अज्ञान-वृद्ध मही ने वृत्त परीक्षा एक  
अज्ञान से बढ़ते जाते हैं कुशल विचार और से साय तक,  
हैं । लेकिन इत न मही अज्ञान और अज्ञान का विषय था  
है न मही अज्ञान और अज्ञान के अज्ञान और अज्ञान के अज्ञान

और वृद्ध से वृद्धि होते हैं ।

अज्ञान विचार और अज्ञान के अज्ञान और अज्ञान के अज्ञान  
अज्ञान और अज्ञान के अज्ञान और अज्ञान के अज्ञान  
अज्ञान और अज्ञान के अज्ञान और अज्ञान के अज्ञान  
अज्ञान और अज्ञान के अज्ञान और अज्ञान के अज्ञान  
अज्ञान और अज्ञान के अज्ञान और अज्ञान के अज्ञान  
अज्ञान और अज्ञान के अज्ञान और अज्ञान के अज्ञान  
अज्ञान और अज्ञान के अज्ञान और अज्ञान के अज्ञान  
अज्ञान और अज्ञान के अज्ञान और अज्ञान के अज्ञान  
अज्ञान और अज्ञान के अज्ञान और अज्ञान के अज्ञान  
अज्ञान और अज्ञान के अज्ञान और अज्ञान के अज्ञान

यह था महिमा टीला ।

के नामक या अथवा ही प्रथम थे ।  
 नामों से पूजा । वर्णों के लिये ही वे जैसे किसी जाड़े कहे  
 उन्हें सराहा और गाँव की बेटियाँ ने उन्हें अपनी कामलम भाव-  
 उन्हें बेटियों ने उन्हें हँस से आजीवन दिया । समकालीन ने  
 निकलस विभाग के अधिकाधिक के पाँच अमीन पर न पड़े थे ।

वर्षान की खाली कोइ कर निकला था ।  
 गाँव की पानी—जैसे नियोजन और धर्म की मिली खाली वाक्य ने  
 खूब से भाव और गुँड लागी था और दिया था पहिली बार अपने  
 'निकली पकी थी । अब आदात बड़े सभों ने एक कर सकारों  
 'निकली खरागार थी बड़े रात अब बरसों के बाद वाक्य की

कर पानी मिलते रहे । सवमुच मिलल ही गया महिमा टीला ।  
 सादेव और उनके साथी काफी बाद तक सबकी स्वयं खीच खीच  
 उनके पीछे लिले और तहेसिल के सब अफसर थी । बीबीओ  
 ने 'साखाल अमिर' की सजा दी थी । मिनिस्टर बड़े गये और  
 फिरने साफ और भीड़े थे पहिले घँट, जिन्हें पीकर भगना

मिनिस्टर महोदय ने कृषि का विषय उपेक्षा किया ।  
 कोइ कर कृषि की पूजा हुई और चांदी के गहने रेथम की डोर से  
 दिया ही भाषण के बाद सब ने लालियाँ बनाई । फिर नादिल  
 था, लेकिन लिये सब ने खाना भाव से भूना । बीबीओ ने हँकूम  
 और बोट के बारे में कूट कहे जो बनवासियों की समझ से परे  
 मिनिस्टर ने भाषण देते हुए अजबो, अनन्त, योगना, समाजवाद  
 देवने भाव थे, आदर्य-वर्कल थे । कृषि के पास ही सभा हुई ।  
 गाँव के लोग जो इस समझार, सिनेमा और मिनिस्टर की मोटर  
 गाँव के लोग, स्त्री, पुरुष और बच्चे सभी खीच थे । लीस



पाष अन्दर चली गई। घर की झीलत देखकर भरी दम घुटने लगा।  
 गई। लिटरी में पड़ी चारपाई पर मुझे लिटा कर बड़े अपने मां के  
 बालिका की खबर की और दूसरे ही मिनट बड़े मुझे अन्दर लिटा के  
 ले गए, मैं अन्दरी से लपका हुआ गया। नकीसा ने अपनी  
 ही नहीं एक बाघर की भी बंदी है।

और कहीं मिलेगी? फिर मुझे स्थान आया कि बड़े लखनऊ की  
 अदब, ये लिटरेज, ये नकासत, ये अर्वाचीरी लखनऊ के अनाया  
 अन्दाज में कहे और मैं सोचने लगा क्या कन्वर है यह भी; यह  
 में है। इसीलिए आपकी लकीफ दे रही हूँ।" लड़की ने लखनवी  
 "जी इनायत है हुआ है करम है। एक खत आया है। अंधेजी  
 में उठाते हूँ प्रया।

"खस रही बेटा। कहीं खिरपत तो है।" मैंने बच्ची को गोद  
 एक ही सांस में कह गई।

"आदाब करती हूँ बाबा हुआ। अम्मी मुहंजरमा ने आपकी  
 खताम कहा है।" भरे बाघर दोस्त की पांव बर्षाया बेटा नकीसा

खत को मंगल

मैं देख रही हूँ पर की दीवारें गगन गगन घटख गई हैं ।  
 उमंग दरारें पैदा हो गई हैं—पैदा हो गई हैं जैसे किसी टूटे हुए  
 सामाजिक ढाँचे में पैदा हो जाती हैं । दीवारों और छत की सफेदी  
 पर धूप की एक डलकी सी गहरे जाम गई है । छत से चूने वाली  
 पानी की लकीरों में काली की रंगत उभर आई है । छत और  
 दीवारों का पल्लवार गगन गगन से अछूट रहता है और उन पर कोई  
 लीसे नहीं उड़ता और न आ रहा है ।

को तरहे बदलना लग रहे हैं ।  
 हो गई है । उमंग से उधारदार घटख गम है और खिन्न मौजियाँ  
 मेरी दीवारें बहुत गूँथ होना थी । गहर उतकी बाधाव काफी कम  
 रकबाियाँ और कठोर नहीं हैं फिर पर अतिक फलों की बँधकर  
 कानन पर भी ही गमनाली और कानरी के पालि नहीं हैं ;

आर आर हो रहे हैं ।

हो कर रहे हैं । गहर उतकी गम से अछूट रहता है और न आ रहा है ।  
 मेरी दीवारें बहुत गूँथ होना थी । गहर उतकी बाधाव काफी कम  
 रकबाियाँ और कठोर नहीं हैं फिर पर अतिक फलों की बँधकर

कानन पर भी ही गमनाली और कानरी के पालि नहीं हैं ;  
 उमंग दरारें पैदा हो गई हैं—पैदा हो गई हैं जैसे किसी टूटे हुए  
 सामाजिक ढाँचे में पैदा हो जाती हैं । दीवारों और छत की सफेदी  
 पर धूप की एक डलकी सी गहरे जाम गई है । छत से चूने वाली

पानी की लकीरों में काली की रंगत उभर आई है । छत और  
 दीवारों का पल्लवार गगन गगन से अछूट रहता है और उन पर कोई  
 लीसे नहीं उड़ता और न आ रहा है ।



की ही बुझाया करता था। जिस कारण से भरे भाव नहीं  
 की वही थी वह एक बारगी घूम गई। पानी के सिंचन पर मरिचक  
 एक बारगी और वही मरिचक के ही मरिचक के ही मरिचक के ही मरिचक के ही  
 की वही से धरे तक देखा। उभरती पान धुप करने का अन्त देखा  
 की-पान से आई। धरे पान की रकीकी पर नवर रानी। मरिचक  
 जिसकी कलई कलई कलई कलई कलई कलई कलई कलई कलई कलई कलई  
 में वह भी वही रानी था कि मरिचक कलई की एक वरिचक में

। और मरिचक की ही वही मरिचक के ही मरिचक के ही मरिचक के ही

सकता था! औरों की जोन में मरिचक के मरिचक के मरिचक के मरिचक के  
 धाई मरिचक मरिचक से देखा तो वह धरे मरिचक के मरिचक के मरिचक के  
 मरिचक के मरिचक के मरिचक के मरिचक के मरिचक के मरिचक के मरिचक के  
 मरिचक के मरिचक के मरिचक के मरिचक के मरिचक के मरिचक के मरिचक के  
 मरिचक के मरिचक के मरिचक के मरिचक के मरिचक के मरिचक के मरिचक के  
 मरिचक के मरिचक के मरिचक के मरिचक के मरिचक के मरिचक के मरिचक के  
 मरिचक के मरिचक के मरिचक के मरिचक के मरिचक के मरिचक के मरिचक के

आगे कलई मरिचक की वही मरिचक के ही मरिचक के ही मरिचक के ही

मरिचक के मरिचक के मरिचक के मरिचक के मरिचक के मरिचक के मरिचक के  
 मरिचक के मरिचक के मरिचक के मरिचक के मरिचक के मरिचक के मरिचक के  
 मरिचक के मरिचक के मरिचक के मरिचक के मरिचक के मरिचक के मरिचक के  
 मरिचक के मरिचक के मरिचक के मरिचक के मरिचक के मरिचक के मरिचक के  
 मरिचक के मरिचक के मरिचक के मरिचक के मरिचक के मरिचक के मरिचक के  
 मरिचक के मरिचक के मरिचक के मरिचक के मरिचक के मरिचक के मरिचक के  
 मरिचक के मरिचक के मरिचक के मरिचक के मरिचक के मरिचक के मरिचक के

मृत्यु यह भी था है किवनी कीशियाँ और विर के बाद हम  
नवरत्न की वसने दीराने बीमारी में इतरादी मरद दी है ।  
अन्य और संस्कृति की खासा वंशवा दे रही है । निराला और  
करी था, "माई कुँमते विर की यहाँ नहीं लिखते । यह आजकल  
उत्पादी और विर विर के साथ हम मरते वसते अरुणाल में  
वप खुले होते में अगी खते हो विर था है । मृत्यु था है कि  
मरे दीर की मरे दी मदीन से ऊपर हो मरे और मरे अंगिक

की पत्नी की वप था कि वप मरना मरना ।  
म मदीन आ रही था किशियाँ की ओर में मदीन अपने शायर दीर  
मरना वप वप मरना मरना मरना मरना मरना मरना मरना मरना  
मरना मरना मरना मरना मरना मरना मरना मरना मरना मरना  
मरना मरना मरना मरना मरना मरना मरना मरना मरना मरना  
मरना मरना मरना मरना मरना मरना मरना मरना मरना मरना

मरना मरना मरना मरना मरना मरना मरना मरना मरना मरना  
मरना मरना मरना मरना मरना मरना मरना मरना मरना मरना  
मरना मरना मरना मरना मरना मरना मरना मरना मरना मरना  
मरना मरना मरना मरना मरना मरना मरना मरना मरना मरना  
मरना मरना मरना मरना मरना मरना मरना मरना मरना मरना

मरना मरना मरना मरना मरना मरना मरना मरना मरना मरना



से खड़ी थापर की बोली से खल का मजबूत कैसे बयान कहे ?  
 है। मैं सोच रहा हूँ, 'कितनी ही और  
 से ऊपर बोलेंगे कि वह सरकार के विरुद्ध मजबूत से आगे  
 है। और आज जब उसे मरे दो महीने  
 आकाशवाणी की बानी देने वाला कवि भी मर मिटी के नीचे है मरेगा  
 दो महीने बीत गए। जनता के दुःख-दर्द, उसकी आत्मा-

संवेदनिक रूप से प्रकट किया।

की। 'बेलाखी और मजबूतों से बलाघार थापर देकर अपना दुःख  
 कविता में कविताएँ, लेखकों ने लेख लिख कर अद्विजलियाँ अपना  
 किया। पर पत्रकारिता ने संपादकीय और विरोध लेख लिखे।  
 अखबारों ने काले हाथिये देकर उसकी सूर्य का समाचार प्रकाशित  
 माना। बाजार बन्द रहे। स्कूल कालेखों में बाफ डे हुआ।  
 के लिये भी पूरे मधु, दुनिया से उठ गया। और मरने के मातम  
 और एक दिन थापर-लिखक पास इलाज की छुट्टियाँ, कफन

न मान्य हो सका।

दिया गया था। मगर अफसोस उसके जीने की सरकार का निरवय  
 स्थिति और का सूर्य। तबल मरकर सोती एक से थक  
 प्रकाशित-अप्रकाशित कविताएँ, गल्प समाजों, बीमारी, आर्थिक  
 प्रस्तावों में उसका नाम, अपना, पर, सकल, उसकी

जा सका।"

की मरकर शव दोजिथे शक्ति आणके मामले पर विचार किया  
 धार से भारत सरकार विरोध चिन्तित है। कथन संलग्न प्रस्तावों  
 के रूप में आपकी सेवाएँ सराहनीय हैं। आपकी बीमारी के समा-  
 बंधन आ गया, "पर के लिये सन्तुष्ट। सन्तुष्ट और संस्कृति  
 न चली। सरकार को एक खल लिख दिया गया। बीमारे ही दिन  
 की है उम्मीद न थी। फिर भी हमारी विद के आगे उस बेचारे की  
 उसे इसके लिये बेगार कर पाये थे, गौतिक उसे खूद, सरकार से

खल का मजबूत



